www.thearyasamaj.org

संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ १०००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ २.००

वर्ष : १२१ ● अंक : ५१ २० दिसम्बर, २०१६ पौष कृष्ण सप्तमी सम्वत् २०७३ ● दयानन्दाब्द १६२ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११७

स्वामी श्रद्धानन्द विशेषांक

हिन्दुओं के पुरखे प्राचीन आर्य

स्वामी श्रद्धानन्द

आजकल के हिन्दुओं के पुरखा प्राचीन आर्य, जिनके नाम पर हमारी मातृभूमि आर्यावर्त्त कहलायी, बहुत ही सभ्य तथा संगठित जाति के थे। प्राचीन भारतीय इतिहास की निष्पक्ष शोध से सिद्ध हो जायेगा कि आज संसार की सभ्य कहलाने वाली जातियाँ जिस समय जंगलों में जंगली जानवरों की तरह भटकती फिरती थीं और पेड़ों की पत्तियाँ ही जिनके शरीरों का सहारा थीं, उस समय आर्य ऐसी असली संस्कृति को सींच रहे थे, जिस की जोड़ की सभ्यता आज भी पैदा नहीं हुई। उनकी सभ्यता उन्नत, उदार एवं व्यापक थी, उससे उस समय का सम्पूर्ण जाना हुआ संसार प्रभावित था। आर्यावर्त्त के सम्पूर्ण महाद्वीप में सुख और शान्ति का साम्राज्य था, परिणामस्वरूप ध्रुवों फारस, चीन, जापान, पूर्वी भारतीय द्वीप समूहों तथा दूसरे गोलार्थ तक भी, जहाँ पुरानी आर्य सभ्यता के चिन्ह राम-सीता के वार्षिक समारोहों तथा भारतीय-प्रारम्भ वाले पुराने अवशेषों में पाये गये हैं, औपनिवेशिक दल भेजे जाते थे।

फारस तथा यूनानियों द्वारा प्रारम्भ किये गये राज्यों में धुँधले इतिहासों में विदेशियों के भारत पर कुछ आक्रमणों का हाल मालूम पड़ता है परन्तु इनका भारतीय जनता पर कोई असर नहीं पड़ा। यदि आक्रमणकारी कुछ विदेशी पीछे छोड़ भी गये तो विभिन्न आर्य जातियों ने पचा लिया, समय पाकर वे भारतीय राष्ट्र के हिस्सा बन गये। ईसाई संवत् के शुरू होने से पहले मकदूनिया का सिकन्दर महान् ही सब आक्रमणकारियों से अधिक सफल होकर सतलुज नदी के किनारे तक पहुँचने में कामयाब हो सका था। सिकन्दर ही था जिसने अपने सेनापतियों को भारतीय क्षत्रप-सामन्त शासक के रूप में नियुक्त किया था परन्तु उसी समय समुद्रगुप्त तथा दूसरे भारतीय शासक हुए जिन्होंने केवल विदेशियों से अपनी खोई हुई जमीनें छीनीं अपितु यूनानी राजकुमारियों से विवाह भी किया जो अपने यूनानी अनुचरों के साथ दूसरे भारतीय-आर्य कुलों में उत्पन्न सन्तानों के समान हिन्दू बन गई। भारतीय अपनी पुरानी पवित्रता को छोड़ कर जब वाममार्ग की अपवित्र क्रियाओं को करने तथा दूसरी बुराइयों में पड़ गये, उस समय जनता के सुधार का बीड़ा भगवान् बुद्ध ने उठाया परन्तु इनके अनुयायी भी कट्टर मज़हबी बन गये। इसका नतीज़ा हुआ कि संयुक्त भारतीय जनता दो विरोधी दलों में बंट गयी।

दो शताब्दी से अधिक समय तक सम्पूर्ण आर्यावर्त्त पर बौद्ध धर्म का प्रभाव रहा। भगवान बुद्ध द्वारा प्रचारित शुद्ध धर्म जब अनास्तिकवाद तथा एक खास तरह के कर्मकाण्ड में पड़ बिगड़ गया तो उस समय शंकराचार्य ने वेदान्त के आध्यात्मिक हथियार को हाथ में ले बौद्ध धर्म को भारतभूमि से निकाल बाहर किया। इस समय राष्ट्र की पुरानी प्रतिष्ठित शासन-व्यवस्था के अनुकूल स्थापित सर्वोच्च शक्ति की परम्परा के विरूद्ध प्रतिक्रिया के रूप में अनियन्त्रित स्वेचछाचारी राज्यतन्त्रों ने सिर उठाना प्रारम्भ किया। वेद में प्रतिपादित आर्यो के सामाजिक संगठन का पुराना आदर्श धीमे-धीमे बदलता गया। इसके साथ ही राष्ट्र का आदर्श भी बदल गया।

आर्य-युग में भारतीय राज्य जनता की धरोहर समझे जाते थे। सिकन्दर के समय में भी कुछ राज्य ऐसे थे जिनमें राजा नहीं होते थे, यूनानी लेखकों ने इन्हें प्रजातन्त्र के रूप में वर्णित किया है। उस समय राज्यों और राजाओं के नाम राज्य परिवार पर न होकर जनता के नाम पर होते थे। बौद्ध-युग में धीमे-धीमे विदेशी हमलों के लगातार होने तथा विदेशी शासन के कारण शासन व्यवस्था सम्बन्धी मामलों में जनता की सम्मति कम-से-कम पूछी जाने लगी और राजा की ताकत लगातार स्वेच्छाचारी होती गई और अन्त में राज्यसत्ता का अधिकार जनता द्वारा न प्राप्त होकर दैवी कृपा से प्राप्त समझा जाने लगा। कौन हकूमत करता है- जन-साधारण ने इसका विचार करना छोड़ दिया- जो कोई राजा या राजकीय परिवार अपनी शक्ति को स्थापित करने में समर्थ होता उसी के प्रति राजभक्ति दिखाने में गौरव अनुभव करते थे।

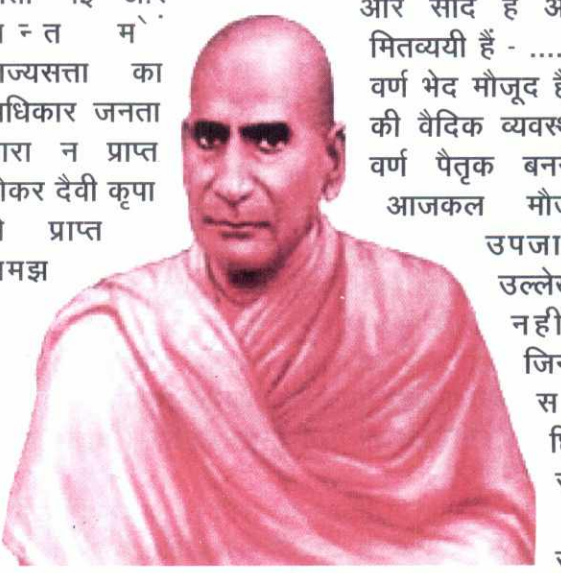

भारत में राजाओं के दैवी अधिकार के सिद्धान्त ने मजबूत जड़ जमा ली। 'नराणां नराधिपम्' मनुष्यों में राजा रूप में मेरी शक्ति ही शासन करती है- भगवान् कृष्ण के इन सुन्दर तथा उत्साहवर्धक वाक्य की ग़लत व्याख्या की जानी लगी। संवत् ६६६ विक्रमी (मई ६२६ ईसवी) के ज्येष्ठ मास में स्थानेश्वर (थानेसर) में हर्ष जिस समय गद्दी पर बैठा तो उस समय आर्यो की मातृभूमि का नाम आर्यावर्त्त से बदल कर हिन्दुस्तान हो गया। हर्ष के राजपण्डित बाणभट्ट तथा प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनसांग् के आधार पर हम कह सकते हैं कि हर्ष वास्तव में एक चक्रवर्ती महाराजा था और उसके समय तक हिन्दुओं का अधःपतन अधिक न पनप सका था। १ साल तक हर्ष ने राज्य की बागडोर सम्भाली और उसके समय में विदेशी प्रभाव बिल्कुल देखने में नहीं आता था।

ह्यूनसांग् कहता है- ''देश की विभिन्न जातियों तथा वर्णो में ब्राह्मण सब से अधिक पवित्र और आदरणीय हैं ..... क्षत्रिय और ब्राह्मण अपने जीवन में बिल्कुल खरे और झूठा आडम्बर न करने वाले, सच्चे और सादे हैं और वे बहुत मितव्ययी हैं - ..... चार पैतृक वर्ण भेद मौजूद हैं।'' गुण-कर्म की वैदिक व्यवस्था की जगह वर्ण पैतृक बनने लगे थे। आजकल मौजूद हजारों उपजातियों का उल्लेख उस समय नहीं मिलता जिनसे आज का समाज छिन्न-भिन्न हो रहा है।

ह्यून सांग् कहता है- ''पहला स्थान ब्राह्मणों का है। वे अपने सिद्धान्त का पालन करते हैं तथा सख्ती से आचार सम्बन्धी पवित्रता को निबाहते हुए संयमपूर्वक जीवन बिताते हैं। क्षत्रियों का दूसरा स्थान है, इन्हीं से राजन्यों की जाति का निर्माण होता है। कई पीढ़ियों तक सर्वोच्च-शक्ति इन्हीं के पास रही, भला करने की इच्छा तथा दया इनके उद्देश्य हैं। व्यापारियों की श्रेणी-वैश्यों का तीसरा स्थान है जो व्यापार के लायक वस्तुओं का विनियम करते हैं या लाभ के लिये दूर और पास जाते हैं। किसानों तथा शूद्रों का चौथा स्थान है। ये जमीन को उपजाऊ बनाने में मेहनत करते हैं तथा बोने और काटने के काम में बहुत मेहनती हैं।'' वैदिक वर्ण- व्यवस्था से इस समय अन्तर आ गया मालूम पड़ता है। किसान पूरे वैश्य समझे जाते थे न कि शूद्र। वैदिक काल में सेवा करने वाली श्रेणी शूद्रों की समझी जाती थी और उस समय पाँचवाँ वर्ण कोई नहीं था।

''एक वर्ण का सदस्य अपने वर्ण में ही विवाह करता है। पिता या माता के पक्ष कके सम्बन्धियों में आपसी विवाह नहीं होता और कोई स्त्री अपना

पृष्ठ...८ का शेष....

वेदामृतम्

यजस्व वीर प्रविहि मनायतो, भद्रं मनः कृणुष्व वत्रतूर्ये।
हविष्कृणुष्व सुभगो यथाससि, ब्रह्मणस्पतेरव आ वृणीमहे।।
ऋग् 2.26.2

हे मनुष्य! हे आत्मन्! तू वीर है, वीर जननी की कोख से उत्पन्न हुआ है, रण बाँकुरा है, संग्राम करने के लिए सैन्य लेकर आ जुटने वालों को अपनी शक्ति से विकीर्ण एवं विध्वस्त कर सकने वाला है। तू अपने सामर्थ्य को पहचान, अपनी वीरता के अनुरूप कार्य कर। युद्ध का बिगुल बजाने वालों से परास्त मत हो, अपितु जो तेरे मन को काबू में करना चाहें, मन को निरुत्साहित करना चाहें, मन के समान त्वरित गति से तुझपर आ टूटना चाहें, मन में अभिमान को धारण कर तुझे निर्मूल करना चाहें, उन आन्तरिक और बाह्य शत्रुओं पर तू उनके सक्रिय होने से पूर्व ही आक्रान्ता बनकर टूट पड़। वृत्र–संहार के, पाप और पापियों की हिंसा के, इस युद्ध में अपने मन को सदा भद्र बनाये रख। यदि तेरा मन भद्र रहेगा, तो पाप–विचार भी, जो तुझपर आक्रमण करने आयेंगे, भद्र विचार के रूप में परिणत हो जायेंगे। पापियों के सम्बन्ध में यह याद रख कि तेरी लड़ाई उनके अन्दर विद्यमान पापों के साथ है, न कि उनके व्यक्तिगत के साथ। अतः यदि उनके अन्दर वर्तमान पाप को तू विनष्ट कर देता है तो निष्पाप होकर वे तेरे मित्र हो सकते हैं।

हे आत्मन्! तू यजन कर, परमात्मा की पूजा कर, सज्जनों की संगति कर, तेरे पास जो कुछ भी दान करने योग्य है, उसका दान कर। तू समाज या राष्ट्र के यज्ञ में अपनी हवि दे, आत्मोत्सर्ग कर। याद रख, सौभाग्यवान् हैं वे आत्माएँ जो किसी महान् कार्य के लिए आत्मोत्सर्ग करती हैं।

देवेन्द्रपाल वर्मा — प्रधान/संरक्षक
डॉ. धीरज सिंह — कार्यवाहक प्रधान
स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती — मंत्री/प्रधान सम्पादक
आचार्य वेदव्रत अवस्थी — सम्पादक

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

ईश्वर पर अटल आस्था का नाम श्रद्धानन्द

नास्तिक मुंशीराम से उनके कोतवाल पिता नानक चन्द जी ने जब कहा कि - ''बेटा मुंशीराम एक दण्डी सन्यासी, बड़े विद्वान व योगी आये हैं उनके प्रवचन सुनकर तुम्हारी शंकाये समाप्त हो जायेगी।'' चलने की हामी भरने के बाद भी मुंशीराम के मन में संशय था कि '' केवल संस्कृत जानने वाला साधु बुद्धि की क्या बात करेगा'' पिता जी के साथ मुंशीराम जब व्याख्यान स्थल पर पहुँचे तो महर्षि दयानन्द का तेजस्वी दिव्य आभायुक्त मुख मण्डल को देखते ही उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गयी। प्रथम दिन ही ईश्वर के निज नाम ओ३म् की अद्‌भुत व्याख्या महर्षि देव दयानन्द के श्री मुख से सुनकर नास्तिक मुंशीराम अपने आत्मिक आनन्द में आकंठ डूब गये। यह ईश्वर के परिचय का प्रथम दिवस ही उनकी ईश्वर के प्रति श्रद्धा की शुरूआत थी। फिर तो मुंशीराम महर्षि के भक्त बन गये। ऋषि के दरबार में वह सर्वप्रथम पहुँच कर अपनी उपस्थित अभिवादन के रूप में दर्ज करवाते। यहाँ तक महर्षि की दिनचर्या का पता लगाने के लिए, एक सम्पादक महोदय के साथ रात्रि में ही उत्सुक होकर मुंशीराम ने पीछा किया। समधिस्थ महर्षि के दर्शन कर कृतार्थ तो हुए ही ईश्वर पर विश्वास की दृढ़ता मुंशीराम की और बढ़ गयी।

कमिश्नर एडवार्ड्स अति के सम्मुख महर्षि के द्वारा किरानियों (ईसाईयों) के सम्बन्ध में सत्यता कही गई तो नाराज हो गये। खंजायी लक्ष्मी नारायण के समझने पर महर्षि ने निडरता पूर्वक ''आत्मा के स्वरूप'' पर बोलते हुए, उपस्थित अंग्रेज अधिकारियों की परवाह न करके गीता का यह श्लोक-

नैनम् छिन्दन्ति शस्त्रणि नैनम् दहति पावकः।
न चैनम् क्लेदयन्त्यायो न शोषयति मारुतः।।

कहकर गरजते हुए कहा था कि ''यह शरीर तो अनित्य है, इसकी रक्षा में प्रवृत्त होकर अधर्म करना व्यर्थ है। इसे जिस मनुष्य का जी चाहे नाश कर दे। किन्तु वह शूरवीर पुरुष मुझे दिखाओं जो मेरी आत्मा का नाश कर दे। जब तक ऐसा वीर संसार में दिखाई नहीं देता तब तक मैं यह सोचने के लिए तैयार नहीं कि मैं सत्य को दबाऊँगा या नहीं।। आत्मा की अनित्यता का ऐसा सुन्दर व्याख्यान, मुंशीराम को अन्दर तक झकझोर गया।

व्याख्यान के अन्तिम दिवस मुंशीराम ने जब महर्षि आनन्द सरस्वती से कहा कि ''महाराज आपकी तर्क शक्ति बड़ी तीक्ष्ण है। आपने मुझे चुप तो करा दिया, परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर का कोई अस्तित्व है।'' महर्षि ने गम्भीर स्वर में मुंशीराम के जिज्ञासु कथन का प्रत्युत्तर देते हुए कहा - ''देखो, तुमने प्रश्न किये, मैंने उत्तर दिये- यह युक्ति की बात थी। मैंने कब प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारा विश्वास परमेश्वर पर करा दूँगा। तुम्हारा परमेश्वर पर विश्वास उस समय होगा जब वह प्रभु स्वयं तुम्हें विश्वासी बना देगें। कठोपनिषद का यह वचन प्रमाण स्वरूप कहा

''नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुम् स्वाम्।।

अर्थात् इस आत्मा को न तो हम प्रवचनों से प्राप्त कर सकते हैं और न मेधा के द्वारा उसे प्राप्त किया जा सकता है। वह तो स्वयं ही जिसे अपने उपासक के रूप में चुन लेता है उसके आगे अपने स्वरूप को प्रकट कर देता है।

इसके कुछ समय बाद मुंशीराम ने महर्षि लिखित ''सत्यार्थ प्रकाश'' का स्वाध्याय करने के पश्चात् ऊहापोह की स्थिति से निकलकर आर्य समाज की सदस्यता ग्रहण की। लाहौर आर्य समाज में पहली बार के अपने उद्‌बोधन से ही उपस्थित आर्यजनों पर अपनी छाप छोड़ दी। महात्मा मुंशीराम के जीवन में परिवर्तन का यह समय उनकी नास्तिकता व विलासिता आदि को नष्ट करके ज्ञानका उज्जवल प्रकाश लेकर आया। भारत में शिक्षा सम्बन्धी नयी क्रान्ति का उद्‌घोष महात्मा मुंशीराम ने सन् १९०२ में हरिद्वार में ''गुरुकुल'' की स्थापना करके किया। अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति ''गुरुकुल कांगड़ी'' को दान देने के बाद अपने व अपनी सन्तानों के लिए भी कुछ न छोड़ा तो लोगों ने उन्हें ''महात्मा'' की उपाधि दी। ईश्वर के प्रति अटल विश्वास ने उन्हें श्रद्धानन्द बना दिया। सन् १९१७ में सन्यास ग्रहण करने के बाद वह एक कर्मयोगी के रूप में उपस्थित हुए। कांग्रेस से मोह भंग होने के पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दुओं को संगठित करना व शुद्धि आन्दोलन के माध्यम से लाखों मोपला व विद्यार्मियों को वापस हिन्दू धर्म में लाये। इस्लाम के इतिहास में पहली बार यदि किसी ने दिल्ली की जामा मस्जिद से किसी हिन्दू संन्यासी ने वेद मंत्र बोलकर अपना उद्‌बोधन किया था तो वह स्वामी श्रद्धानन्द थे। २३ दिसम्बर, १९२६ को एक मुस्लिम मतान्ध व्यक्ति द्वारा संन्यासी श्रद्धानन्द के जीवन का अवसान कर दिया। श्रद्धानन्द के बलिदान से रिक्त हुए स्थान को कोई भर नहीं सकता है, परन्तु उनके अधूरे कार्यो को, हम सभी मिलकर पूरा तो कर ही सकते हैं। आज देश में हिन्दुओं की दशा किसी से छिपी नहीं है। मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों में हिन्दू असुरक्षित तो हैं ही, स्त्रियों की मर्यादायें भी तार-तार हो रही हैं। हम अपने देश में ही सुरक्षित नहीं हैं। इसके लिए आवश्यक हैं कि हम अपने मतभेदों को भुलाकर, संगठित होकर स्वामी श्रद्धानन्द के सपनों को पूरा करें, यही सच्ची श्रद्धाजंलि उनके प्रति होगी।

-कार्यकारी सम्पादक

गतांक से आगे.....

अथ तृतीय समुल्लासारम्भः

अथाऽध्ययनाऽध्यापनविधिं व्याख्यास्यामः

-महर्षि दयानन्द सरस्वती

अब तीसरे समुल्लास में पढ़ने का प्रकार लिखते हैं। सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण कर्म्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने,चांदी, माणिक मोती मूँगा आदि रत्नों से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं हो सकता। क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयाशक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है। संसार में देखने मे आता है कि आभूषणों के योग से बालकादिकों का दुष्टों के हाथ से होता है।

विद्याविलासमनसो धुतशीलशिक्षाः सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुः खदलनेन सुभूषिता ये धन्या नरा विहितकर्मपरोपकाराः।।

जिन पुरूषों का मन विद्या के विलास में तत्पर रहता, सुन्दर शील स्वभाव युक्त, सत्यभाषणादि नियम पालनयुक्त और अभिमान अपवित्रता से रहित, अन्य की मलीनता के नाशक, सत्योपदेश विद्यादान से संसारी जनों केदुःखों के दूर करने से सुभूषित, वेदविहित कर्मो से पराये उपकार करने में रहते हैं, वे नर और नारी धन्य हैं। इसलिये आठ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की शाला में भेंज देवें। जो अध्यापक पुरूष व स्त्री दुष्टाचारी हों उन से शिक्षा न दिलावें, किन्तु जो पूर्ण विद्यायुक्त धार्मिक हों वे ही पढ़ाने और शिक्षा देने योग्य हैं।

द्विज अपने घर में लड़कों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्य्य कुल अर्थात अपनी–अपनी पाठशाला में भेंज दें। विद्या पढ़ने का स्थान एकान्त देश में होना चाहिये और वे लड़के और लड़कियों की पाठशाला दो कोश एक दूसरे से दूर होनी चाहिये।जो वहां अध्यापिका और अध्यापक पुरूष वा भृत्य अनुचर हों वे कन्याओं की पाठशाला में सब स्त्री और पुरूषों की पाठशाला में पुरूष रहें। स्त्रियों की पाठशाला में पांच वर्ष का लड़का और पुरूषों की पाठशाला में पांच वर्ष की लड़की भी न जाने पावे। अर्थात जब तक वे ब्रह्मचारी वा बह्मचारिणी रहें तब तक स्त्री वा पुरूष का दर्शन, स्पर्शन, एकान्तसेवन, भाषण विषयकथा, परस्परक्रीड़ा विषय का ध्यान और संग इन आठ प्रकार के मैथुनों से अलग रहें और अध्यापक लोग उन को इन बातों से बचावें। जिस से उत्तम विद्या, शिक्षा शील, स्वभाव, शरीर और आत्मा के बलयुक्त होके आनन्द को नित्य बढ़ा सकें।

पाठशालाओं से एक योजन अर्थात चार कोश दूर ग्राम वा नगर रहे।सब को तुल्य वस्त्र, खान–पान आसन दिये जायें, चाहे वह राजकुमार व राजकुमारी हो, चाहे दरिद्र के सन्तान हों सब को तपस्वी होना चाहिये।उन के पिता अपने सन्तानों से वा सन्तान अपने माता पिताओं से न मिल सकें और न किसी प्रकार का पत्र व्यवहार एक दूसरे से कर सकें, जिस से संसारी चिन्ता से रहित होकर केवल विद्या बढ़ाने की चिन्ता रखें।जब भ्रमण करने को जायें तब उनके साथ अध्यापक रहैं, जिस से किसी प्रकार की कुचेष्टा न कर सकें और न आलस्य प्रमाद करें।

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्।।

इसका अभिप्राय यह है कि इस में राजनियम और जातिनियम होना चाहिये कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे अपने लड़का और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजे वह दण्डनीय हो। प्रथम लड़की का यज्ञोपवीत घर में ही हो और दूसरा पाठशाला में आचार्य्यकुल में हो। पिता माता व अध्यापक अपने लड़का लड़कियों को अर्थसहित गायत्री मन्त्र का उपदेश कर दें। वह मन्त्र–

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात्।।

इस मन्त्र में जो प्रथम (ओ३म्) है उस का अर्थ प्रथमसमुल्लास में कर दिया है वहीं से जान लेना। अब तीन महाव्याहतियों के अर्थ संक्षेप से लिखते हैं– 'भूरिति वै प्राणः ' 'यः प्राणयति चराऽचरं जगत् स भूः स्वयम्भूरीश्वरः' जो सब जगत् के जीवन का आधार प्राण से भी प्रिय और स्वयम्भू है उस प्राण का वाचक होके 'भूः' परमेश्वर का नाम है। 'भुवरित्यपानः' 'यः सर्व दुःखमपानयति सोऽपानः' जो सब दुःखों से रहित, जिस के संग से जीव सब दुःखों से छूट जाते हैं इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'भुवः है। 'स्वरिति व्यानः' 'यो विविधं जगद् व्यानयति व्याप्नोति स व्यानः'। जो नानाविध जगत् में व्यापक होके सब का धारण करता है इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'स्वः' है। ये तीनों वचन तैत्तिरीय आरण्यक के हैं।

(सवितुः) 'यः सुनोत्युत्पादयति सर्व जगत् स सविता तस्य'। जो सब जगत् का उत्पादक और सब ऐश्वर्य का दाता है। (देवस्य) 'यो दीव्यति दीव्यते वा स देवः '। जो सर्वसुखों का देनेहारा और जिस की प्राप्ति की कामना सब करते हैं। उस परमात्मा का जो (वरेण्यम्) 'वर्त्तुमर्हम्' स्वीकार करने योग्य अतिश्रेष्ठ (भर्गः) 'शुद्धस्वरूपम्' शुद्धस्वरूप और पवित्र करने वाला चेतन ब्रह्म स्वरूप है (तत्) उसी परमात्मा के स्वरूप को हम लोग (धीमहि) 'धरेमहि' धारण करें। किस प्रयोजन के लिये कि (यः) 'जगदीश्वरः' जो सविता देव परमात्मा (नः) 'अस्माकम्' हमारी (धियः) 'बुद्धीः बुद्धियों को (प्रचोदयात्)' प्रेरयेत्' प्रेरणा करे अर्थात् बुरे कामों से छुड़ा कर अच्छे कामों में प्रवृत्त करे।

'हे परमेश्वर! हे सच्चिदानन्दस्वरूप! हे नित्यशुद्धमुक्तस्वभाव! हे अज निरञ्जन निर्विकार! हे सर्वान्तर्यामिन्! सर्वाधार जगत्पते सकलजगदुत्पादक! हे अनादे! विश्वम्भर सर्वव्यापिन्! हे करूणामृतवारिधे! सवितुर्देवस्य तव यदों भूर्भुवः स्वर्वरेण्यं भर्गोऽस्ति तद्वयं धीमहि दधीमहि ध्यायेम व कस्मै प्रयोजना–येत्यत्राह। हे भगवन्! सविता देवः परमेश्वरों भवान्नस्माकं धियः प्रचोदयात् स एवास्माकं पूज्य उपासनीय इष्टदेवों भवतु नातोऽन्यं भवत्तुल्यं भवतोऽधिकं च कचिंत् कदाचिन्मन्यामहे।

हे मनुष्यो! जो सब समर्थो में समर्थ सच्चिदानन्दानन्तस्वरूप, नित्य शुद्ध, नित्य बुद्ध नित्य मुक्तस्वभाव वाला, कृपासागर, ठीक–ठीक न्याय का करनेहारा, जन्ममरणादि क्लेशरहित, आकाररहित, सब के घट–घट का जानने वाला सब का धर्ता, पिता, उत्पादक, अन्नादि से विश्व का पोषण करनेहारा सकल ऐश्वर्ययुक्त जगत् का निर्माता, शुद्धस्वरूप और जो प्राप्ति की कामना करने योग्य है उस परमात्मा का जो शुद्ध चेतनस्वरूप है उसी को हम धारण करे। इस प्रयोजन के लिये कि वह परमेश्वर हमारे आत्मा और बुद्धियों का अन्तर्यामीस्वरूप हम को दुष्टाचार अधर्म्मयुक्त मार्ग से हटा के श्रेष्ठाचार सत्य मार्ग में चलावें उस को छोड़कर दूसरे किसी वस्तु का ध्यान हम लोग नहीं करें। क्योंकि न कोई उसके तुल्य और न अधिक है वही हमारा पिता राजा न्यायाधीश और सब सुखों का देने हारा है।

इस प्रकार गायत्री मन्त्र का उपदेश कर सन्ध्योपासन की जो स्नान, आचमन, प्राणायाम आदि क्रिया हैं सिखलावें। प्रथम स्नान इसलिए है कि जिस से शरीर के ब्रह्म अवयवों की शुद्धि और आरोग्य आदि होते हैं। इस में प्रमाण–

अभिद्गर्त्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।। यह मनुस्मृति का श्लोक हैं

जल से शरीर के बाहर के अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप अर्थात सब प्रकार के कष्ट भी सह के धर्म ही के अनुष्ठान करने से जीवात्मा ज्ञान अर्थात पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के विवेक से बुद्धि दृढ़ निश्चय पवित्र होता है। इस से स्नान भोजन के पूर्व अवश्य करना।

क्रमशः अगले अंक में.....

www.thearyasamaj.org

धरोहर.....

बलिदानी परम्परा के पोषक-

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
उ.प्र., लखनऊ।

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती ऐसे महापुरुष है जिसके जन्म लेने से भारत भूमि भी धन्य हो गई है। पंजाब प्रान्त के जालन्धर जिले में तलवन ग्राम को यह सौभाग्य मिला पिता लाला नानक चन्द्र जी कोतवाल भी ऐसे प्रतिभाशाली पुत्र पाकर प्रसन्नता के पारावार में प्रफुल्लित हो उठे थे। बालक का नाम मुन्शीराम रख लिया पढ़ने में तेज था खेलने में अपने साथियों के लिए भारी पड़ता था बलवान शरीर से सभी साथी घबराते रहते थे।

आज के परिप्रेक्ष्य में स्वामी श्रद्धानन्द जी प्रेरणा पुरुष हैं आपने अपनी आत्मकथा ''कल्याण मार्ग का पथिक नामक पुस्तक लिखी है उसमें बचपन की घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। आपके पिता अंग्रेजी राज्य में कोतवाल पद पर प्रतिष्ठित थे सरकारी नौकरी उन दिनों किसी सौभाग्यशाली को ही प्राप्त होती थी उसका बेटा स्वाभाविक है प्रभावशाली होगा पिता जी भी मुंशीराम के बचपन के जिद्दी स्वभाव से परिचित थे और चाहते थे कि यह पुत्र-सुपुत्र बन जाये जैसे - जैसे बालक- किशोरावस्था को प्राप्त कर रहा था वैसे-वैसे ही उनकी चिन्ता बढ़ रही थी सौभाग्यशाली दिन था जब बरेली में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का पदार्पण हुआ और उनके प्रभावशाली प्रवचन उपदेश का प्रभाव कोतवाल भी नानकचन्द जी पर भी पड़ा वे सोचने लगे कि यदि मेरा पुत्र मुंशीराम एक दिन यहां आकर उपदेश सुन ले तो जीवन में परिवर्तन आ सकता है। ऐसा निश्चय करके सायंकाल घर आने पर अपने मन की बात बेटे मुंशीराम को बुलाकर कह दी। बालक मुंशीराम ने पिता जी से पूछा कि वे दण्डी सन्यासी स्वामी दयानन्द जी क्या पढ़े हैं तो पिता जी का उत्तर था कि वे संस्कृत के बहुत बड़े विद्वान् हैं। एफ०ए० जो उस समय लगभग कक्षा १२ के समकक्ष थी बालक मुंशीराम को अभिमान था यह सुनकर कि संस्कृत के विद्वान् तो मेरे बराबर भी नहीं जानते अतः में उनसे प्रश्न करूँगा उनसे कोई उत्तर नहीं दिया जायेगा फिर भविष्य में इस सत्संग और उपदेश सुनने से पीछा छूट जायेगा। जो प्रायः आज के युवा बालक सोचते हैं वही बालक मुंशीराम ने सोचा और रात्रि में उनसे प्रश्न पूछने के लिए प्रश्नों की सूची तैयार कर ली- आत्मा परमात्मा धर्म से जुड़े उन प्रश्नों को लेकर वे अत्यन्त उत्साहित थे प्रातःकाल जैसे ही पिता जी सत्संग की सुरक्षा व्यवस्था देखने के लिए चलने को तैयार हुए वैसे ही कहा मुंशीराम बेटा चलो वे अपनी आत्मकथा में लिखते है कि मैं तैयार होकर साथ चल पड़ा और वहां जाकर देखा कि अभी स्वामी जी के आने में १ घण्टा समय है लेकिन वहां हजारों की संख्या में लोग विद्यमान हैं तो बिना दर्शन किये उनके विषय में मेरे विचार बादल गए और जब देखा कि श्रोताओं में पढ़े लिखे लोग एवं अंग्रेज अधिकारी भी उपस्थित हैं तो श्रद्धा बढ़ गई कि आने वाले सन्यासी सामान्य नहीं कोई विशेष महापुरुष हैं मैं कोतवाल का बेटा होने के नाते आगे श्रोताओं की पंक्ति में बैठ गया लोगों के आने की संख्या बढ़ रही थी लगभग २० हजार लोग उनके आने तक वहां पहुंच चुके थे जब स्वामी जी घोड़ा गाड़ी में बैठकर आये आकर मंच पर खड़े हुए सभी लोग सम्मान में खड़े हो गए स्वामी जी ने सभी को आशीर्वाद दिया और बैठ गए जनता शान्त भाव से बैठकर सुनने लगी स्वामी जी ने मुझे भी देखा और प्रवचन प्रारम्भ किया ओ३म् शब्द की व्याख्या करते हुए आपने मेरी सभी शंकाओं का समाधान अपने उपदेश में कर दिया मेरी श्रद्धा और बढ़ गई मुझे लगा कि इन्होंने मेरे मन की बात समझ ली ये योगी है। अब मन में विचार आया कि इनसे आशीर्वाद लूंगा और अपने मन की बात कहकर ईश्वर सम्बन्धी शंका जो मेरे हृदय में हैं कि विश्वास कैसे करूं कि वह है जिज्ञासा बढ़ गई कार्यक्रम के पश्चात् भीड़ में मैं उनके पास तक नहीं पहुंच पाया और वे घोड़ा गाड़ी में बैठकर चले गए मैं भी पीछे पीछे दौड़ता रहा शहर के बाहर एक बाग में जहां स्वामी जी ठहरे हुए थे पहुंचा और उन्हें प्रणाम किया आशीर्वाद लिया और उनसे अपने मन की बात बताई। स्वामी जी ने मुझे देखा और बोले ईश्वर पर विश्वास तो उस दिन होगा जब आप पर प्रभु की कृपा होगी कृपा पाने के लिए पुरुषार्थ करो।

मैं घर वापस आ गया और उस दिन से मेरे जीवन में परिवर्तन हो गया। उनकी दिनचर्या जानने की प्रबल इच्छा वे योग साधना - समाधि - प्राणायाम कैसे करते हैं?

सारी जिज्ञासाये बढ़ती गई और एक दिन आया कि वही बालक मुन्शीराम से महात्मा मुन्शीराम और फिर वही बाद में स्वामी श्रद्धानन्द सन्यासी बनकर पूरे देश में एक क्रान्तिकारी सन्यासी बनें। आपका वह रूप भी सभी को प्रभावित करता है जब अंग्रेजी सरकार के खिलाफ अपना जलूस दिल्ली के बाजार में निकाल रहे थे तभी उसे रोकने के लिए अंग्रेज सिपाहियों ने संगीने लगा दी कि आगे बढ़े तो गोली मार देंगे तभी आर्य सन्यासी सबसे आगे बढ़े और वीरता पूर्वक गरजते हुए कहा कि आओ हिम्मत है तो चलाओ गोली सन्यासी का सीना खुला है इतना सुनते ही अंग्रेजी संगीने झुक गई और वे सिर झुकाकर खड़े हो गए जलूस आगे बढ़ गया आज भी उनकी प्रतिमा दिल्ली घण्टा के समक्ष हमें प्रेरणा प्रदान कर रही है। उनका वह रूप जो हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रमाण है जब दिल्ली की जामा मस्जिद में त्वं हिनः पिवा.. मंत्र बोल कर परमात्मा की व्याख्या की थी आज के नेताओं के लिए प्रमाण पुरुष के रूप में प्रतिष्ठित करता है। सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी कदम था जब भावी पीढ़ी के निर्माण में संकल्प लिया था अपनी बेटी को स्कूल के बाद घर पर गाते हुए सुना ईसा-ईसा बोल-तेरा क्या लगेगा मोल-ईसा मेरा राम-रमैया-ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया। इतना सुनते ही लगा कि हमारे बच्चे हमारी संस्कृति-सभ्यता और इतिहास को भूल जायेगें तभी जालन्धर वाली अपनी कोठी में बेटियों की पढ़ाई के लिए कन्या पाठशाला की स्थापना कर दी जो आज भी चल रहा है। इसके पश्चात लड़के की पढ़ाई के लिए एक गुरूकुल की स्थापना की जो आज आदर्श विश्व विद्यालय का रूप ले चुका है गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार सन-१९०२ में जब कांगड़ी ग्राम में मुन्शी अमन सिंह जी जमींदार ने पूरा ग्राम शिक्षा के लिए समर्पित किया था कोई अपने पुत्र पढ़ने के लिए नही भेजता था। तभी आपने अपने दोनों पुत्रों को छात्र रूप में प्रविष्ट किया स्वयं आचार्य बने और उसके निर्माण के लिए दान संग्रहीत किया प्रारम्भ में छप्पर बनाये वहां सिंह व्याध्र आदि हिंसक जानवरों का भी खतरा रहता था लेकिन धुन के धनी ने भारतीय संस्कृति की रक्षा का व्रत लिया था उसे मूल रूप से सुदृढ़ किया हजारों स्नातक तैयार हुए जो अपने जीवन से भावी पीढ़ी का निर्माण करने में सक्षम हुए। उसके पश्चात् समाज में छुआ छूत परम्परा में व्याप्त हो गई थी उसे दूर करने का अभियान चलाया जो हमारे भाई इस बीमारी से विधर्मी हो गए थे उन्हें शुद्ध करने के लिए शुद्धि का सुदर्शन चक्र चलाया जो राम बाण औषधि के रूप में प्रभावित हुई और पूरे देश में एक लहर पैदा हो गई। विधर्मी बने हिन्दू पुनः शुद्ध होने लगे। आगरा क्षेत्र में तथा गढ़वाल क्षेत्र में मानो क्रान्ति आ गई थी मेव जो गुर्जर जाति से मुसलमान बने थे वे इस बात पर शुद्ध होने के लिए तैयार हुए की हमारी बेटी ओर रोटी का भी सम्बन्ध पुनः प्रारम्भ कराओ इसके लिए अनंगपुर ग्राम में पंचायत की लोग तैयार हुए इसी शर्त पर एक उन दिनों म० गंगाराम जी दनकौर के पास एक ग्राम के निवासी थे उन्होंने अपनी बेटी देने की बात स्वीकार कर ली कि एक बेटी देने से हजारों बेटियों का भाग्य सुधर जायेगा हजारों ग्राम शुद्ध होकर पुनः वैदिक धर्मी बन जायेगें वे अपने ग्राम गए घर पर बात की कोई तैयार नही हुआ ग्राम में पंचायत की लोगों ने मना कर दिया लड़ाई हुई उनका सिर फूट गया सिर पर कपड़ा बांधकर अपनी बेटी को लेकर स्वामी श्रद्धानन्द जी के पास पहुंचे और कहा कि अपनी शुद्धि प्रारम्भ करो स्वामी श्रद्धानन्द जी को जैसे संजीविनी मिल गई उस बिटिया का विवाह शुद्ध हुए (मेव) हिन्दू युवक से कर दी और क्या था? बस आर्य जनता-हिन्दू जनता में अतीव उत्साह आ गया और शुद्धि आन्दोलन तूफान बन गया हजारों लोग प्रतिदिन शुद्ध होने लगे यही उत्साह गुरूकुल इन्द्रप्रस्थ की स्थापना के लिए वातावरण बना अनंगपुर ग्राम के जमींदार ने गुरूकुल के लिए भूमिदान कर दी जो आज लाल किले की तरह हमें उस कहानी की याद दिला रहा है। उ०प्र० में म० नारायण स्वामी जी ने उसे बढ़ाया पं० लेखराम जी आर्य पथिक ला० लाजपत राय ने पंजाब में मलकानों को शुद्ध किया और पूरे देश में एक लहर पैदा हो गई। यदि यही क्रम कुछ दिन ओर चल जाता तो फिर पाकिस्तान बनने की स्थिति न आती मुस्लिम लीग के नेताओ को अच्छा नहीं लगा ये सब मान सकते हैं, परन्तु महात्मा गांधी ने स्वामी जी के विरोध में भाषण एवं लेख लिखने प्रारम्भ कर दिये उसका दुष्परिणाम हुआ कि बुनरासी (बु० शहर) उ०प्र० निवासी मुस्लिम युवक अब्दुल रसीद ने दिल्ली जाकर स्वामी जी के दर्शन करने का बहाना बनाया स्वामी जी बीमार चल रहे थे उन्हें बुखार निमोनिया था पं० धर्मपालजी सेवा में थे उसने दर्शन किये वार्ता की पीने को पानी मांगा सेवक धर्मसिंह पानी लेने गया तभी पिस्तौल से तीन गोलियां चलाकर स्वामी श्रद्धानन्द जी को अमर शहीद बना दिया। २३ दिसम्बर, १९२६ का दिन आर्य समाज के इतिहास में सदैव याद रहेगा। २५ दिसम्बर को लाखों की भीड़ ने उन्हें अन्तिम विदाई दी। वह दृश्य बड़ा भावपूर्ण था सभी की आँखों में आँसू और हृदय में बलिदान के प्रति पैदा हुआ आक्रोश, स्वामी जी की शवयात्रा में पूरे देश से लोगों ने सम्मिलित होकर अपनी श्रद्धाजंली के साथ संकल्प लिया। आज फिर उसी प्रकार संकल्प लेकर पूरे देश में जन जागृति पैदा करके शुद्धि आन्दोलन को प्रभावी बनाने का कार्यक्रम बनाना होगा। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि हमें ऐसी शक्ति और सद्बुद्धि प्रदान करें। इस बलिदान दिवस पर स्वामी जी के प्रति हार्दिक श्रद्धाजंली समर्पित करते है।

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
गढ़मुक्तेश्वर, हापुड़

www.thearyasamaj.org

स्वामी श्रद्धानन्द की राष्ट्रवादिता

स्वामी श्रद्धानन्द जी का पैतृक नाम मुन्शीराम था उनके पिता तलवन (लुधियाना) में एक प्रतिष्ठित और सम्पन्न व्यक्ति थे। मुन्शीराम जी ने वकालत पास की और इसी को अपनी आजीविनका का पेशा बनाया इस प्रकार के लोगों को अंग्रेजी रंग में रंगा जाना तो उस समय स्वाभाविक था ही किन्तु शराब, मांस और व्यभिचार तक के दुष्कृत्य भी इस वर्ग के लोगों में होना कोई बड़ी बात नहीं थी। मुन्शीराम जी भी कम अधिक रूप में इन सभी दोषों के शिकार थे। किन्तु अपनी भरी जवानी में मुन्शीराम जी उस समय के कट्र भारतीयतावादी, क्रान्तिकारी और बाल ब्रह्मचारी स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में आ गये। शनैः शनैः स्व० दयानन्द का रंग वकील मुन्शीराम पर चढ़ना प्रारम्भ हुआ। उन्होंने सभी दुर्गणों का परित्याग किया। वकील मुन्शीराम से महात्मा मुन्शीराम बन और अन्तोगत्वा स्व० श्रद्धानन्द बन गये। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अपनी यह सारी कहानी स्वरचित आत्मचरित 'कल्याणमार्ग का पथिक पुस्तक' में लिखी है, जिसका अनुकरण महात्मा गांधी ने भी किया।

महात्मा मुन्शीराम और स्व० श्रद्धानन्द ने यूं तो अपने जीवन में अनेक कार्य समाज और देश के हित के लिये किये जिन पर एक पूरा ग्रन्थ लिखा जा सकता है, किन्तु उनकी राष्ट्रवादित जो अन्य सब कार्यो से सर्वोपरिथी वही यहां संक्षेप में उल्लेखनीय है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी राष्ट्र के निर्माण और उन्नति के लिये राष्ट्र के मानवों का निर्माण सर्व प्रमुख समझते थे। और मानव निर्माण का मूलाधार शिक्षा है जिस के क्षेत्र में उन्होंने क्रान्तिकारी पग उठाये।

शिक्षा में समन्वय-

स्वामी श्रद्धानन्द उच्चकोटि के देशभक्त थे। महात्मा गांधी के साथ कन्धे से कन्धा लगा कर देश की स्वतन्त्रता के लिये हर प्रकार का बलिदान देने को तैयार थे। उनकी तेज नजरों ने यह भांप लिया कि अंग्रेजों द्वारा संचालित शिक्षा प्रणाली अधिकतर रूप से अंग्रेजो की दासता के समर्थक, उनकी शासन की मशीन को चलाने वाले पुर्जे कलर्क आदि ही तैयार कर रही है जो अपनी संस्कृति, सभ्यता और इतिहास से सर्वथा अनभिज्ञ ही नही अपितु उसकी हीनता के संस्कार उनके मस्तिष्क पर ऐसे अंकित दिये जाते हैं कि वे अपने को भारतीय कहलाने में भी अत्यन्त लज्जा का अनुभव करते हैं। अतः वे ऐसी शिक्षा प्रणाली चाहते थे जिस जिस से भारतीय लोग अपनी पुरानी संस्कृति, अपनी सभ्यता अपना इतिहास अपनी वेशभूषा और अपनी भाषा के गौरव को समझे और सिर ऊँचा उठाकर अपने आपको भारतीय कहें। इसके लिये उन्होंने गुरूकुल शिक्षा प्रणाली अपनायी और १९०१ में गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की जो आज गुरूकुल कांगणी विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध है स्वामी जी संकीर्ण विचारों के नहीं थे अपितु अत्यन्त उदार मना थे। अतः जहां वे प्राचीनता के समर्थक वहां आधुनिकता जितनी ग्राहय है उसको भी वे नहीं छोड़ना चाहते थे अतः गुरूकुल शिक्षा प्रणाली में प्राचीनता और आधुनिकता दोनों का समन्वय किया और सबसे पहले अपने दोनों लड़कों को गुरूकुल में प्रवेश करवाया। उनके मार्गदर्शन में गुरूकुल कांगडी ने अनेक देशभक्त नेता, विद्वान, लेखाक और साहित्यकार पैदा किये। महात्मा गांधी ने जब गुरूकुल कांगड़ी की प्रसिद्धि सुनी तो उन्होंने उसे देखने की इच्छा प्रकट की। एक बार गुरूकुल कांगड़ी देख लेने पर तो महात्मा गांधी गाहे बगाहे वही जाकर ठहरने लगे। यह उल्लेखनीय है कि महात्मा गांधी को सर्वप्रथम महात्मा कहना स्व० श्रद्धानन्द ने ही प्रारम्भ किया था।

राष्ट्रीय आन्दोलन

देश में महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता आन्दोलन चल रहा था। स्वा-श्रद्धानन्द जी यद्यपि आर्य समाज के मूर्धन्य नेता थे किन्तु उन्होंने आर्यसमाज के अन्य कार्यक्रमों से अधिक प्राथमिकता राष्ट्र के आन्दोलन को दी। समूचे आर्यसमाजों को इस आन्दोलन में झोंक दिया। पंजाब में इस आन्दोलन का नेतृत्व आर्य समाजी नेता, परमदेशभक्त शेरे पंजाब लाला लाजपतराय को सौंपा और स्वयं देहली में इस आन्दोलन का नेतृत्व किया।

देहली में अंग्रेजी के विरूद्ध सत्यग्रहियों का जत्था निकल रहा था। स्वामी श्रद्धानन्द जी आगे आगे उसका नेतृत्व कर रहे थे। जत्था घन्टाघर के पास पहुंच गया। घन्टाघर पर सत्याग्रहियों पर अत्याचार करने के लिये अंग्रेजों ने गोरखा पलटन खड़ी कर रखी थी। ज्यों ही स्वामी श्रद्धानन्द जी जत्थे का नेतृत्व करते हुए घण्टाघर पर पहुंचे एवं गोरखा सिपाही ने संगीन उनकी छाती की ओर तानते हुवे कहा खबरदार एक कदम भी आगे बढ़े तो संगीन छाती से पार हो जायेगी। देश के लिये अपनी प्राणों तक की बाजी लगाने वाले निडर सन्यासी ने भी आगे बढ़कर अपनी छाती गोरखा की संगीन के आगे तानते हुए कहा मेरी छाती खुली है, यदि हिम्मत हो तो अपनी संगीन चलाओं। दो मिनट तक स्वामी जी की छाती गोरखा की संगीन के सामने तनी रही, गोरखा की संगीन पीछे हट गयी, स्वामी जी उसी तरह सीना ताने जत्थे का नेतृत्व करते हुए आगे बढ़ गये।

जामा मस्जिद पर भाषण,

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की राष्ट्रवादिता और एकता के प्रतीक का यह प्रबल ऐतिहासिक प्रमाण है कि उन्हें मुस्लिम समुदाय ने अपने ऐतिहासिक धार्मिक स्थल देहली के लाल किले के सामने स्थित जामा मस्जिद पर समूचे विश्वभर के मुस्लिम वर्ग को भाषण द्वारा सम्बोधित करने और उन्हें वैदिक मानवतावाद की शिक्षा देने के लिये आमन्त्रित किया। यह घटना न केवल आर्य समाज के इतिहास में, अपितु समस्त विश्व के इतिहास में अद्वितीय है कि किसी भी सम्प्रदाय के लोगों अपने से विरोधी धार्मिक मन्तव्यों वाले व्यक्ति को अपने उच्चतम धार्मिक स्थल पर भाषण के लिये आमन्त्रित किया हो। स्वामी श्रद्धानन्द जी का जामा मस्जिद से दिया गया वह भाषण आज भी प्रसिद्ध है और विश्वभर के मुस्लिम वर्ग के लिये अनुकरणीय है जामा मस्जिद के शाही इमाम अब्दुल बुखारी को चाहिये कि वह मुस्लिम वर्ग को राष्ट्रवाद और एकता की शिक्षा देने के लिये स्वामी श्रद्धानन्द जी के उस भाषण को प्रतिदिन जामा मस्जिद से प्रसारित और प्रचारित करें। आर्यसमाज जो कार्यक्रम प्रतिवर्ष २५ दिसम्बर को स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के उपलक्ष्य में जामा मस्जिद के सामने सुभाष पार्क में आयोजित करता है, वह कार्यक्रम मुस्लिम समुदाय को आयोजित करना चाहिये और स्वामी के उसी भाषण को दोहराना चाहिये।

शुद्धि-आन्दोलन

इसी राष्ट्रवाद और एकता की कड़ी को सुदृढ़ बनाने के लिये स्वामी जी ने शुद्धि आन्दोलन प्रारम्भ किया जिसका महत्व राष्ट्र के इतिहासकारों की तो बात ही दूर रही, स्वयं आर्यसमाज के विद्वानों ने पूरी तरह नही समझा और उसकी व्याख्या नही की।

स्वामी श्रद्धानन्द जी के शुद्धि आन्दोलन का अर्थ धर्मान्तरण या धर्म परिवर्तन नहीं है। ये शब्द अत्यन्त संकीर्ण और धर्म शब्द में अर्थ न समझने के कारण प्रयुक्त होते हैं। धर्म तो सबका एक ही है और वह है मानव धर्म, जिसमें एक दूसरे के प्रति स्नेह सम्मान, ईमानदारी, सच्चाई, सदाचार, सज्जनता, ठगी और चोरी आदि का अभाव, अंहिसा, शौच, सन्तोष विद्या और इसकी वृद्धि और उन्नति आदि सार्वभौम और सार्वकालिक मानवीय गुण शामिल हैं, जिन्हें स्वामी दयानन्द ने अपनी सत्यार्थ प्रकाश विभिन्न सामुदायवादियों से प्रश्न करके पूछा है कि बताओ कौन सा ऐसा धर्म सम्प्रदाय है जो इन उपर्युक्त गुणों को धर्म नहीं मनाता, इनके विपरीत हिंसा, चोरी, मिथ्या भाषा, दुराचार आदि को अधर्म न मानकर धर्म मानता है? अतः स्वामी श्रद्धानन्द जी इन्हीं सार्वभौक और सार्वकालिक तक मानवीय गुणों को धर्म मानते थे अतः उनके शुद्धि आन्दोलन का अभिप्राय धर्मान्तरण या धर्म परिवर्तन नहीं था। यह तरीके तो संकुचित क्षुद्राशय और चालाक लोगों के हैं। स्वामी श्रद्धानन्द के शुद्धि-आन्दोलन का अर्थ अत्यन्त उदार महान, आशयता और बुद्धिवाद तथा मुक्ति और तर्कवद पर आधारित था।

स्वामी जी के शुद्धि आन्दोलन का प्रथम अर्थ तो उन भटके हुवे लोगों को सही मार्ग पर लाना था जो अपने अज्ञान के कारण था पिछले समय के अपने पूर्वजों की राजनीतिक या समाजिक विवशता की परिस्थितो के कारण इस मानतावादी सच्चे धर्म को भूलकर भटक गये थे और धर्म की कल्पित, मनघड़न्तव्याख्याओं पर खड़े विभिन्न सम्प्रदायों को अपना चुके थे। शुद्धि आन्दोलन कोई धर्म परिवर्तन या धर्मान्तरण नहीं था, अपितु मन, बुद्धि, विचार और कर्मो की शुद्धि था इसीलिये उन्होंने इसे शुद्धि-आन्दोलन नाम दिया।

स्वामी जी के शुद्धि आन्दोलन की व्याख्या तत्कालीन राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य में थी जिसकी तलाश स्वामी जी के अनन्य मित्र और उनसे अनेक राष्ट्रीय समस्याओं में परामर्श लेने वाले महात्मा गांधी जी कर रहे थे जो करनी अपेक्षित और आवश्यक हैं जो सम्भवत आर्य समाज के विद्वान नहीं कर पाये हैं।

तत्कालीन देश की स्वतंत्रता के लिये एक ओर राष्ट्रवादी शक्तियां अपना काम कर रही थी। तो दूसरी और इस राष्ट्रवादी आवाज के विरोध में साम्प्रदायिक झण्डा उठा कर देश के विभाजन की विभीषिका मुंह फाड़कर राष्ट्रवादी नेताओं को भयभीत कर रही थी। ऐसे समय में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने शुद्धि आन्दोलन को इस सम्प्रदायिक महारोग की समाप्ति के लिये रामबाण के रूप में प्रस्तुत किया और प्रयुक्त किया। यदि यह नुस्खा सफल हो जाता और तत्कालीन राष्ट्रवादी शक्तियां इसके महत्व को समझकर इसमें पूरा सहयोग करती तो देश की अखण्डता अक्षुण्ण बनी रहती और सन् १९४७ में देश का साम्प्रदायिक विभाजन न होकर एक अखण्ड राष्ट्र के रूप में स्वतंत्रता मिलती। स्वामी जी यह राज की यही अद्भुत राष्ट्रवादिता थी।

एकता के प्रतीक

२३ दिसम्बर, १९७६ स्वामी श्रद्धानन्द जी को बलिदान जयन्ती मनायी गई। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज हिन्दु, मुस्लिम एकता के प्रबल समर्थक थे। वस्तुतः वे मानव मानव के बीच में साम्प्रदायिक धर्म के नाम पर खड़ी दीवारें गिरा देना चाहते थे मानव जाति में एक दूसरे के प्रति घृणा, ईर्ष्या और शत्रुता के प्रबल कारण सम्प्रदायों को समाप्त कर देना चाहते थे, मानव जाति के अन्दर अनेक ऐतिहासिक युद्धों के एकमात्र कारण कल्पित धर्म के कच्चे धागे का तोड़ कर मानव मात्र को एक दूसरे के गले लगने लगाने के महान कार्य का अपने जीवन में ही मूर्त रूप देना चाहते थे। अपने जीवन के अन्तिम भाग में उन्होंने इसी कार्य को अपना महान उद्देश्य बनाया था क्योंकि उनका यह दृढ़ विश्वास या कि जब तक

क्रमशः.....७

www.thearyasamaj.org

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

भारत देश प्राचीन ऋषि-मुनियों का भारत है, वीर पुरुषों का देश भारत है। आज भी इस देश में सुभाष, चन्द्रशेखर, राजगुरू, सुखदेव, भगतसिंह, गुरू गोविन्द सिंह, गणेश शंकर विद्यार्थी, सावरकर अमर शहीद लेखराम तथा महात्मा श्रद्धानन्द सरस्वती जैसे अनेकों वीर शहीद पैदा हुए हैं। युग निर्माण ऐसे ही महापुरुष किया करते हैं। सुख सुविधाओं में पलने वाले, साधनों की मांग करने वाले इतिहास नहीं बना सकते और न जनता के हृदय में अपना स्थान बना सकते हैं। कोई धनी आज तक युग निर्माता नहीं हुआ। महापुरुष ही युग निर्माता होते हैं।

जवानी में त्याग-तप और संयम का मार्ग अपनाना मुनियों महात्माओं का ही काम है। कल्याण मार्ग के पथिक स्वामी श्रद्धानन्द कहते थे- किसी समुदाय या उसके कुल के जीवन का अनुमान उसके त्याग-तप और बलिदान के आधार ही किया जाता है।

वह समुदाय या कुल धन्य है जिसके प्रवर्तकों या प्रचारकों ने अपने प्राणों का बलिदान देकर, अपना खून बहाकर देश की - मातृभूमि की या वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा की है। उनके अटल ईश्वर विश्वास की अकम्प आत्मा को ही वेद ''अथर्व'' कहता है।

देवता स्वरूप भाई परमानन्द की धमनियों में भी ऐसे ही त्यागी-तपस्वी बलिदानाओं का लहू बहता रहा है। उन्हें अपने रक्त रंजित कुल के वीर इतिहास पर बड़ा गौरव था। इसी विषय को आगे बढ़ाते हुए श्रद्धा से श्रद्धानन्द ने कहा था कि त्यागी-तपस्वी ही राष्ट्र का उद्धार कर सकता है। जिस देश में सम्पन्न वर्ग के प्राणी राष्ट्र-निर्माता होते हैं, संसार में उस जाति के बचने की कोई आशा नहीं है।

आर्य जगत् में स्वामी श्रद्धानन्द जैसा न तो कोई नेता उत्पन्न हो पाया है और न वैसा गुरूकुल का संचालक ही। स्वामी जी के कार्यकाल में देश भर में १०-१५ गुरूकुल थे, तब विद्वानों के दल देश में सर्वत्र दिखाई देते थे। आज देश में गुरूकुल तो दिखाई देते हैं, किन्तु विद्वान कहीं दिखाई नहीं देते। विवेकशील विद्वानों का अभाव सा दिखाई दे रहा है। अधिक तर आर्यसमाजी वेदमंत्रों के सामने अंग्रेजी अंक लिखने की प्राथमिकता दे रहे हैं।

देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी है। पिछली शताब्दी में ऐसे भी महापुरुष थे जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं थी। स्वयं स्वामी श्रद्धानन्द की मातृभाषा हिन्दी नहीं थी, महर्षि दयानन्द की भी मातृभाषा हिन्दी नहीं थी। दोनों महापुरुषों की प्रेरणा हिन्दी भाषा को मिली। गुरूकुल कांगड़ी ने वैज्ञानिक विषयों को हिन्दी माध्यम से पढ़ाया। रसायन शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, विद्युत्शास्त्र, भौतिक शास्त्र विषयों की पाठ्यपुस्तकों को सर्वश्री महेशचरण सिन्हा और गोवर्धन शास्त्री ने तैयार की हिन्दी भाषा में। सभी विश्वविद्यालयों के अधिकारी इस हिन्दी व्यवस्था से चकित रह गये। कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग के प्रधान ने कहा था, मातृभाषा द्वारा उच्चशिक्षा देने के परीक्षण में गुरूकुल कांगड़ी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। (साप्ताहिक आर्यजगत् रविवार २४ दिसम्बर, १९८९)

इस अभूतपूर्व सफलता को देखकर महात्मा गांधी ने महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय से कहा था, ''गंगा के किनारे हरिद्वार के जंगलों में गुरूकुल खोलकर स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दी के माध्यम से उच्चशिक्षा दे सकते हैं तो वाराणसी में गंगा के किनारे बैठकर आप इन बच्चों को रेक्स का पानी क्यों पिला रहे हैं।

आकर्षण के केन्द्र स्वामी श्रद्धानन्द ने १८ वर्ष गुरूकुल के आचार्य पद पर सुशोभित रहकर ब्रह्मचर्य प्रधान राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार किया। छात्रों में राष्ट्रीयता और निर्भीकता के भाव जागृत किये। राष्ट्र भाषा को समृद्ध कर, विदेशियों को भी आकर्षित किया है।

अपने दोनों पुत्रों हरिश्चन्द्र और इन्द्र को सबसे पहले गुरूकुल में भरती कराया और दोनों के साथ का विवाह जाति-पाति के बन्धनों को तोड़कर कराया साथ-साथ अपनी बेटी अमृतकला के साथ भी इसी प्रकार किया। १० अक्टूबर १८८८ को स्वामी जी अपनी डायरी में लिखते हैं मैं कचहरी से लौटकर घर आया तो बेटी वेदकुमारी जो भजन पाठशाला में याद करके आई थी-मुझे सुनाने लगी - ''इक बार ईसा-ईसा बोल तेरा क्या लगेगा। मोल। ईसा मेरा राम रमैया ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया।

मैं चौकन्ना हुआ कि आर्य जाति की पुत्रियों को अपने धर्मग्रन्थों व महापुरुषों की निन्दा करनी भी सिखलाई जाती है। तभी निश्चय किया कि कन्या पाठशाला भी खोलनी चाहिये। नवम्बर, १८८८ को कन्या पाठशाला की स्थापना की ओर कदम बढ़ाया।

मैकाले की शिक्षा पद्धति भारतीयों को अंग्रेजों का मानसिक रूप से गुलाम बना रही थी। इसके प्रतिकार स्वरूप भारतीय परम्परा को जीवित रखने के लिये तथा जीवन के उंचे मानदण्डों को स्थापित करने के लिये गुरूकुल की स्थापना कर शिक्षा के क्षेत्र में एक युग का सूत्रपात कर सवामी जी ने समस्त संसार को सिद्ध करके दिखा दिया कि भारतीय संस्कृति की शिक्षापद्धति विश्व में सर्वश्रेष्ठ है। गोरी सरकार इस गुरूकुल के विस्तार को देखकर बड़ी चिन्तित रहती थी। इन गुरूकुलों को देश भक्तों का कारखाना समझकर विशेष निगाह रखती थी।

राष्ट्रभाषा हिन्दी की दयनीय दशा एवं मैकाले की शिक्षा पद्धति आज भी जीवित है। स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि तभी होगी जब भारत देश का प्रत्येक बुद्धिजीवी प्राणी मैकाले की इंगलिश पद्धति को समूल नष्ट कर दें। (रविवार २७ दिन, १९९२ आर्य जगत्)

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द गुरूकुल में ब्रह्मचारियों को अपना पुत्र मानते थे। प्रति मध्यरात्रि में छात्रावास में घूम-घूम कर देखते थे, मेरे पुत्रों को कोई कष्ट तो नहीं है। क्योंकि वे प्रायः ''अथर्ववेद मंत्र ११-५-९४ आचार्यो मृत्युर्वरूणः सोम ओषधयः पयः का गान गाते रहते थे, जिसमें आचार्य ब्रह्मचारियों का (मृत्युरूपो), वरूण (जलरूप), सोम (चन्द्ररूप), ओषधि (अन्न आदि रूप) तथा पय (दूधरूप) होता है।

एक ब्रह्मचारी उत्सव में अपने पिता के न आने पर अत्यन्त उदास था। पता चलने पर महात्मा जी ने उसे अपने निवास पर बुलाया। उनसे मिलने के बाद ब्रह्मचारी हंसता हुआ लौटकर आया तो साथियों से बोला '' हम भी अपने पिता जी से मिलकर आ रहे हैं। ऐसी ही एक मार्मिक घटना रात्रि के २ बजे की है जिसे कांगड़ी १९४७ के वार्षिकोत्सव पर आचार्य प्रियव्रत जी सुना रहे थे। स्वामी जी छात्रवास में घूमकर निरीक्षण कर रहे थे। एक देवदत्त नामक ब्रह्मचारी को टाइफाइड बुखार में उल्टी हो रही थी। महात्मा जी ने दौड़कर उसकी उलटी अपनी अंजलि में ली और उसे बाहर फेंककर देवदत्त के पैर और सिर को दबाने में लगे रहे। ब्रह्मचारी के होश आने तक उसकी सेवा करते रहे। विद्यार्थियों को ऐसा सेवक गुरू पितृवत् आचार्य किसे कहाँ मिलेगा ?(१९०२ में मुंशी अमन सिंह द्वारा प्रस्त ७०० वीघा जमीन में)

गंगा के उस पार घने कंटीले जंगल में ७०० वीघा जमीन में गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना हुई थी। उसकी पूर्व दिशा में कुछ गुंडे डकैत रहते थे। सुलताना नामक डाकू ने गुरूकुल में डाका डालने की सूचना पर, महात्मा ने सभी छात्रों को लाठी डण्डे और मशाल देकर चारों तरफ खड़ा कर दिया, स्वयं भी एक भाला लेकर खड़े हो गये। सुलताना ठीक दिये समय रात्रि के २ बजे आया। जोर से पूछा-यह क्या हो रहा है। क्यों इतने लड़के हथियारों मशालों के साथ खड़े हैं। स्वामी जी ने आगे बढ़कर कहा-किसी सुलताना डाकू की सूचना पर अपनी रक्षा के लिये हम यहां उसका सामना करने को खड़े हैं। उसने कहा-सुलताना मैं ही हूँ - मुझसे तो पुलिस भी डरती है। श्रद्धानंद ने कहा - यहाँ शिक्षा निःशुल्क होती है हम अपनी रक्षा स्वयं करते हैं। इस प्रकार स्वामी जी के तेजस्वी व्यवहार और वाक् पटुता से सुलताना बड़ा प्रभावित हुआ और घोड़े से उतरकर स्वामी जी के चरण छूकर क्षमा चाहता हुआ वापिस चला गया।

जैसा मैंने ऊपर लिखा है कि गौरी सरकार गुरूकुल कांगड़ी को देशभक्तों का कारखाना समझकर इस पर विशेष निगाह रखती थी। इसकी सूचना, इंग्लैण्ड तक जासूसों द्वारा पहुंचती रहती थी। सन् १९१४ में भावी प्रधानमंत्री सर रैम्जे मैकडानल दीनबन्धु एन्ड्रुज के साथ पुराने गुरूकुल में पहुंचे और स्वामी श्रद्धानन्द से पूछा सुना है यहां इस जंगली गुरूकुल में बम बनाये जाते हैं। स्वामी जी के हाँ करने पर उन्होंने कहा-वे बम हम देख सकते हैं। स्वामी जी ने हाँ कहकर एक घण्टा बजवा दिया। तुरन्त ६०० युवा ब्रह्मचारी पंक्ति बद्ध उनके सामने आकर नमस्ते करते हुए बैठ गये। थोड़ी ही देर में सर रैम्जे मैकडानल ने कहा हम तो बम बनाने की आपकी फैक्ट्री (कार्यशाला) देखना चाहते है। स्वामी जी ने कहा - श्रीमान् जी। यही मेरे बम हैं जो समय आने पर देश की आजादी के लिये कई-कई सौ बमों का काम करेंगे। अब तो ये भारतीय संस्कृति के ऋषि-ऋषियों की वेद संस्कृति में शिक्षित हो रहे हैं। इनकी उच्च-शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा है- अंग्रेजी भाषा नहीं। ये वेद भी पढ़ते हैं।

मैकडानल दीनबन्धु एन्ड्रुज की ओर देखकर मुस्करायें और तुरन्त स्वयं अपने हाथ से स्वामी श्रद्धानन्द जी का चित्र खींचकर उनकी प्रशंसा करते हुए वहाँ से चल दिये।

स्वामी श्रद्धानन्द निराली वीरता के प्रतीक थे। उनकी वीरता में एक विशेष तेजोमय निरालापन था। इसके सम्बन्ध में लौहपुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल गृहमंत्री भारत सरकार ने कहा था - ''स्वामी श्रद्धानन्द जी की याद आते ही १९१९ में चांदनी चौक दिल्ली वाला दृश्य आंखों के सामने आ जाता है। वहां निहत्थी जनता के जलूस पर गोरे सिपाही फायर करने की तैयारी में हैं। स्वामी जी छाती खोलकर आगे आते हैं और कहते हैं- लो चलाओ गोलियां। इस वीरता पर कौन मुग्ध नहीं होता। (रविवार २४ दिसम्बर, १९८९ आर्य जगत् स्वामी श्रद्धानन्द बलिराम दिवस)

इस घटना पर अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के अभिनन्दन में विद्वान वीरपुरुषों ने लिखा-

इस मुल्क के चमन को चश्मेतर से सींचा,
इल्मो हुनर से सींचा कभी मालोजर से सींचा।
श्रद्धा बयां करें क्या कुर्बानियां तुम्हारी,
जब वक्त आ पड़ा तो खून जिगर से सींचा।

इस वीर, भारतीय गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के पुरोधा सन्यासी ने महात्मा गांधी की मुस्लिम तुष्टिकरण की दुर्नीति के विरोध में कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया। आज के मुलायम सिंह यादव की सिमी की पालक नीति से, सिमी आतंकवादी देश के कौने-कौन में पाकिस्तान परस्ती बनकर आग लगाकर देश को बरबाद कर रहे हैं।

इसी प्रकार भारत देश की आजादी में लिप्त २३ दिसम्बर, १९२६ में एक मदान्ध मुस्लिम युवक अब्दुल रशीद ने नया बाजार में रूग्णावस्था में पड़े वीर संन्यासी पर ३ गोली चलाकर उन्हें सदा के लिये राष्ट्र से छीन लिया था।

स्वामी जी के अदम्य साहस, गुरूकुल प्रणाली के सफल संचालन निर्भीकता, स्पष्टवादिता आदि गुणों के कारण सभी देशवासी उनसे प्रभावित थे। जहां लाखों मुस्लिमों की सदारत में इस महामना महात्मा ने फतेहपुरी मस्जिद के बुर्ज पर खड़े होकर वेदमंत्र से भारत वीरों से अंग्रेजी सल्तनत को उखाड़ने की भूमिका की प्रबल स्थापना की थी उस महात्मा को भारत वीरों का शतवार नमन।

प्रेरक :
विद्या वाचस्पति वेदपाल वर्मा शास्त्री

www.thearyasamaj.org

ज्योतिष एवं कुंड़ली-मिलान की वास्तविकता

एक कन्या का विवाह न होने से उसके माता-पिता बहुत चिंतित थे। उन्होंने एक ज्योतिषी से परामर्श किया तो उसने बताया कि कन्या का विवाह अच्छे परिवार में होगा लेकिन होगा विलंब से। इसके काफी दिनों बाद कन्या का विवाह सम्पन्न हुआ। ज्योतिषी की भविष्यवाणी सच साबित हुई। इसके कुछ दिनों के बाद माता-पिता के सामने दूसरी बेटी के विवाह की समस्या आ खड़ी हुई। उन्होंने फिर उसी ज्योतिषी से परामर्श किया तो उसने बताया कि इस कन्या का विवाह भी देर से होगा लेकिन उसके कुछ दिनों के बाद फौरन ही कन्या का विवाह सम्पन्न हो गया। इस बार ज्योतिषी की भविष्यवाणी सच साबित नहीं हुई। मात्र अनुमान के आधार पर कुछ बातें सच निकलने से इस पर पूरी तरह से विश्वास नहीं किया जा सकता लेकिन आज अधिकांश समाज इस कपोल-कल्पित विद्या के भँवर में बुरी तरह से फँसा हुआ है। भारत ही नहीं पूरी दुनिया में ज्योतिष का कोई रूप उपस्थित है और भोले-भोले लोगों के शोषण की प्रक्रिया बदस्तूर जारी है।

आज अंधविश्वास से बुरी तरह से जकड़े समाज में ज्योतिष, भविष्य- दर्शन अथवा कुंड़ली- मिलान पर चर्चा का आयोजन बहुत महत्त्वपर्ण है। यद्यपि इससे इन विषयों के दोनों पक्ष सामने आने की संभावना है लेकिन कटु सत्य ये है कि ये विद्याएँ मात्र अनुमान पर आधारित होने से इनका कोई औचित्य नहीं है। यदि कोई अनुमान संयोगवश सच निकल आए तो लोगों का उस पर विश्वास बढ़ जाता है और इसी विश्वास का फायदा उठाकर कुछ लोग अपने लाभ के लिए इस तथाकथित विद्या का दुरूपयोग करने लगते हैं। प्रायः कहा जाता है कि आज का नवयुवक और शिक्षित समाज इन चीज़ों को महत्त्व नहीं देता लेकिन वास्वविकता इससे भिन्न है। यदि हमारी युवा पीढ़ी और हमारा शिक्षित समाज इसे महत्त्व नहीं देता तो यह गोरख धंधा कैसे इतना फलता-फूलता?वास्तविकता ये है कि हमारी युवा पीढ़ी पहले की अपेक्षा अधिक अंधविश्वास में जकड़ी हुई है। कह सकते हैं कि माता-पिता अथवा परिवार के अन्य बुजुर्ग सदस्यों की भावना के कारण वे ऐसा करने को विवश होते हैं लेकिन इसमें अंश मात्र भी सच्चाई नहीं है। फिर ग़लत बात का विरोध न करना उसका समर्थन करने जैसा ही तो है।

आज के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव ही देखने को मिलता है। विज्ञान में उनकी रूचि कम हो गई है।आज वो ऐसे विषय पढ़ना चाहते हैं जिनसे नौकरी जल्दी मिल जाती है और मोटे पैकेज भी। हमारे वैज्ञानिक एक तरफ तो उपग्रहों का सफल निर्माण और प्रक्षेपण कर रहे हैं तो दूसरी ओर अपनी सफलता के लिए मंदिरों में पूजा भी कर रहे हैं। ऐसी घटनाएँ समाज पर सीधा असर डालती हैं। हमारी युवा पीढ़ी पर इसका सीधा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण खंडित होता है। हमारी युवा पीढ़ी का मंदिरों व अन्य पूजा-स्थलों पर जाने के साथ-साथ क्लबों व जुआघरों में निमित रूप से जाना उनकी आदत है। वह एक तरफ भोगवादी पाश्चात्य संस्कृति के रंग में रंगी हुई है तो दूसरी ओर रूढ़िवादी परंपराओं को मानने में भी पीछे नहीं है। दोस्ती के नाम पर सारी सीमाएँ व वर्जनाएँ टूट रही हैं। ऐसे में ज्योतिष अथवा कुंड़ली-मिलान का औचित्य ही क्या है?

सही अर्थों में ज्योतिष अथवा कुंड़ली-मिलान का कोई वैज्ञानिक आधार है ही नहीं। फिर भी यह उद्योग फल-फूल रहा है तो इसका एक प्रमुख कारण है इस तथाकथित विद्या द्वारा कुछ लोगों की आजीविका चलना। ऐसे लोगों ने ही इसे एक बड़ा बाज़ार बना दिया है। कई बार हम विवश हो जाते हैं कुछ अनर्गल चीज़ों को अपनाने के लिए। कुछ लोगों के लिए इसका कोई महत्त्व नहीं है लेकिन एक फैशन अथवा दूसरों की देखा-देखी इसे करने में उन्हें कोई ऐतराज नहीं होता। कुछ ग़लत परंपराओं के विकास के लिए उनके विरूद्ध हमारा स्पष्ट दृष्टिकोण न होना भी है। उपभोक्तावाद की संस्कृति यहाँ भी हावी है। कई बार यह माफिया का रूप ले लेती है। पिछले दिनों महाराष्ट्र में अंधविश्वास के विरूद्ध काम करने वाले दाभोलकर की हत्या इस बात का प्रमाण है कि यदि हम किसी

ग़लत चीज़ का विरोध कर समाज में जागृति फैलाने का प्रयास करते हैं तो निहित स्वाथों के चलते कुछ लोग यह कतई बर्दाश्त नहीं कर सकते और इसके लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। इस सब के बावजूद कुंड़ली-मिलान और दूसरी बेमानी परंपराओं का निर्वाह किया जा रहा है तो इसका सीधा सा अर्थ है कि हम वास्तव में शिक्षित नहीं हुए हैं तथा हममें पॉज़िटिव एटिट्यूड व कॉमन सेंस का विकास नहीं हुआ है।

जहाँ तक कुंड़ली-मिलान में दांपत्य जीवन की सफलता का प्रश्न है दांपत्य जीवन की सफलता दो लोगों अथवा दो परिवारों की मानसिकता पर निर्भर करती है। यदि दोनों जीवनसाथी एक दूसरे की भावनाओं और आवश्यकताओं को समझकर उन्हें पूरा करने का प्रयास करते हैं तो जीवन की गाड़ी के सुचारू रूप से चलने में कोई बाधा नहीं हो सकती। एक तरफ विवाह रूपी पवित्र बंधन से पहले हम न जाने कितनी नाप-जोख करते हैं, एक दूसरे से अपनी वास्तविकता छुपाते हैं, कई झूठ बोलते हैं, दान-दहेज की बात करते हैं और ऊपर से सुखी वैवाहिक जीवन की लालसा में कुंड़ली का मिलान ज़रूर करवा लेते हैं। जहाँ तक वैवाहित जीवन की सफलता अथवा घर की सुख-शांति का प्रश्न है कई बार कुंडलियों के उत्तम मिलान के बावजूद वैवाहिक जीवन में सफलता नहीं मिल पाती और इसका स्पष्ट कारण है कि हम रिश्तों प्रति संवेदनशीलता व जिम्मेदारी को महत्त्व न देकर कुंड़लियों के मिलान को महत्त्व दे रहे हैं।

इसके विपरीत कुंड़लियों का सही मिलान न होने के बावजूद प्रायः ऐसा देखा गया है कि वैवाहिक जीवन अत्यंत सफल व सुखमय होता है। मेरे पुत्र डॉ0 अमित का विवाह निश्चित हुआ तो पता चला कि कुंड़ली के अनुसार मेरी भावी पुत्रवधू डॉ0 सृष्टि में मांगलिक दोष है जबकि पुत्र में मांगलिक दोष नहीं है। दोनों जातकों में अपेक्षित न्यूनतम गुण भी नहीं मिलते थे। क्योंकि मैं स्वयं कुंड़ली-वुंड़ली में विश्वास नहीं करता इसलिए इस विवाह के सम्पन्न होने में कोई बाधा नहीं आई। सबसे अच्छी बात ये है कि न केवल दोनों जातकों का वैवाहिक जीवन अत्यंत माधुर्यपूर्ण एवं सफल है अपितु परिवार में चार पीढ़ियों के सदस्यों के बीच पूर्ण सामंजस्य व सौहार्द है। जीवन में विषम परिस्थितियों का आना अथवा वैचारिक विभिन्नता होना स्वाभाविक है। इनको कुंड़ली के मिलान से जोड़ना मात्र अंधविश्वास अवैज्ञानिकता व अज्ञानता है। जीवन को सार्थकता प्रदान करना है तो लव मैरिज करें अथवा अरेंज्ड मैरिज संबंधों की गरिमा का निर्वाह करना सीखें, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता व परंपरा के नाम पर एक दूसरे को छलना व ठगना बंद करें। शादियों में अनाप-शनाप खर्च व दहेज के रूप में सामान व नकदी के लेन-देन का प्रचलन बंद करें।

बचपन में सुना हुआ एक क़िस्सा याद आ रहा है जो ज्योतिष की वास्तविकता के संबंध में बिलकुल सटीक बैठता है। एक चरवाहा था। वह समझदार भी ख़ब था। वर्तमान घटनाक्रम को ठीक से समझकर उसके परिणाम के बारे में पहले ही बता देता था। लोग-बाग उसे पक्का भविष्यवक्ता मानने लगे। उसके भविष्यज्ञान की चर्चा दूर-दूर तक फैल गई। बात राजा के कानों तक भी पहुँचते देर न लगी। राजा ने चरवाहे को तलब किया और उसकी परीक्षा लेने का मन बना लिया। राजा ने अपनी मुट्ठी में एक टिड्डा बंद कर लिया और चरवाहे से पूछा कि बता मेरी इस मुट्ठी में क्या है। ठीक-ठीक जवाब देगा तो इनाम पाएगा वरना मौत के घाट उतार दिया जाएगा। चरवाहा बेचारा कैसे बताए कि राजा की मुट्ठी में क्या है? वह डर के मारे थर-थर काँपने लगा। संयोग से चरवाहे का नाम भी टिड्डा था।

चरवाहे ने घटनाक्रम को ठीक से समझकर अनुमान लगाया कि अब जान बचनी मुश्किल है और राजा से कहा, "राजा तेरी मुट्ठी में बस टिड्डे की नन्ही सी जान है और कुछ नही।" चरवाहे ने तो बस इतना ही कहा था कि राजा की मुट्ठी में टिड्डे नामक चरवाहे की नन्ही सी जान है लेकिन राजा ने समझा कि चरवाहे ने सही भविष्यवाणी की है और उस चरवाहे को अपने राज्य का प्रमुख ज्योतिषी नियुक्त कर दिया। यदि हम विवेकपूर्वक विचार करें तो यही पाते हैं कि ज्योतिषशास्त्र कोई विज्ञानसम्मत विषय नहीं अपितु मात्र एक संयोग है। इस पर विश्वास करना और इसके आधार पर कोई महत्त्वपूर्ण निर्णय लेना अंधविश्वास ही नहीं, हमारे लिए घातक भी हो सकता है।

ए.डी.106-सी पीतमपुरा,
दिल्ली-110034
फोन नं. 09555622323
Email :srgupta54@yahoo.co.in

www.thearyasamaj.org

पूर्ण छः है, उनकी संक्षिप्त व्याख्या

सृष्टि में हम जो कुछ देखते है, सृष्टि सम्बन्धी हम जो कुछ पढ़ते है या अनुभव करते है, उनमें केवल छः तत्व या पदार्थ हो पूर्ण है। बाकी सब अपूर्ण हैं। पूर्ण वह होता है जिसमें हम न कुछ जोड़ सके और न कुछ घटा सके, ऐसी सभी वस्तुएं पूर्ण कहलाती हैं। वे छः है जिनके नाम (१) ईश्वर (२) जीव (३) प्रकृति (४) ईश्वर की बनाई सृष्टि (५) प्रलय (६) ईश्वर के बनाए वेद। इन सबकी अलग-अलग व्याख्या इसी भांति।

१- ईश्वर - ईश्वर स्वयं में तो पूर्ण है ही और इसका ज्ञान भी पूर्ण है, इसलिए इसकी बनाई समस्त वस्तुएं भी पूर्ण है कारण जिसका ज्ञान पूर्ण होता है उसकी कृति भी पूर्ण होता है। साथ ही ईश्वर अनादि व अनन्त है यानि ईश्वर का न कोई आरम्भ है और न कोई अन्त है। जीव या मनुष्य अत्पज्ञ है इसलिए उसकी कृति भी पूर्ण न होकर अपूर्ण होती है। उसमें कम व अधिक होने की सम्भावना बनी रहती है। ईश्वर पूर्ण के अतिरिक्त सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्व अन्तरयामी, अजर, अमर व निराकार भी है। स्वभाव के हिसाब से वह दयालु, परोपकारी, न्यायकारी व करूणाा का सागर है। ईश्वर के मुख्य छः काम है। (१) सृष्टि की रचना करना (२) उसका पालन करना। (३) समय पर उसको नष्ट करके प्रलय करना (४) प्रलय में जीवों व परमाणुओं की सुव्यवस्था बनाए रखना (५) मनुष्य के किये हुए अच्छे व बुरे कर्मो का यथावत अच्छे कर्मो का सुख के रूप में बुरे कर्मो का दुःख के रूप में फल देना (६) सृष्टि के आदि में वेद-ज्ञान चार ऋषियों के मुख से दिलवाना जिसके अनुसार चलने से मनुष्य चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार करते हुए मोक्ष प्राप्त कर सके। इसी उद्देश्य से ईश्वर वेद-ज्ञान देता है।

२- जीव - जीव भी ईश्वर की भांति अनादि व अनन्त है परन्तु अल्पज्ञ होने से इसकी कृति अपूर्ण है किन्तु जीव स्वयं में पूर्ण है। यहां यह समझने की बात है कि जीव या मनुष्य की आत्मा अनादि व अनन्त है और पूर्ण भी है परन्तु मनुष्य का शरीर पूर्ण है कारण ईश्वर की कृति है परन्तु अनादि व अनन्त नहीं है। बनता व मिटता रहता है। आत्मा कमी नहीं मरती परन्तु वह अनेक शरीर धारण करती रहती है। जीव दो किस्म की योनियों में प्रवेश होता है। पहली योनि पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि की जो भोग योनि है और दूसरी योनि मनुष्य की है जो भोग के साथ-साथ कर्म योनि भी है। भोग योनि में किये हुए कर्मो का फल नहीं मिलता और कर्म योनि में किये हुए कर्मो का कर्मो के अनुसार अच्छा या बुरा फल मिलता है। कर्म भी दो किस्म के होते हैं। एक स्वाभाविक कर्म दूसरा नैमित्तिक कर्म। स्वाभाविक कर्म ईश्वर प्रदत्त होते हैं जैसे खाना, पीना- सोना-जागना, उठना-बैठना व सन्तान पैदा करना आदि। इन कर्मो का फल नहीं मिलता। यह कर्म पशु-पक्षियों में अधिक होता है। दूसरा कर्म नैमित्तिक। यह कर्म सीखाने से सीखा जाता है, बिना सीखाए नहीं आता। यह कर्म मनुष्य में अधिक होता है। इस कर्म का ईश्वर फल देता है मनुष्य की प्रवृत्ति सुख पाने की होती है इसलिए मनुष्य को अच्छे कर्म दया, करूणा व परोपकार के करने चाहिए।

३- प्रकृति - प्रकृति भी अनादि व अनन्त है, परन्तु यह ईश्वर और जीव की भांति चेतन नहीं है, जड़ है यानि अचेतन या गतिहीन है। यह स्वयं में कोई काम नहीं कर सकती। ईश्वर य जीव इससे काम करवाते हैं परन्तु यह पूर्ण है इसमें कम या अधिक नहीं हो सकता। प्रकृति का तात्पर्य परमाणु होता है, जिनको मिलाकर ईश्वर सृष्टि बनाता है। ईश्वर की सृष्टि अन्दर से होती है, वह बनाता हुआ नहीं दीखता। जैसे मनुष्य का शरीर अन्दर से बनता है तभी बचपन, यौवन व वृद्ध अवस्था आती है। मनुष्य बाहर से बनाता है। जैसे कोई मकान बनाता है तो दिखाई देता है।

४- सृष्टि - सृष्टि भी पूर्ण है कारण यह पूर्ण ज्ञानवान ईश्वर की बनाई हुई है। पूर्ण ज्ञानवान की कृति भी पूर्ण होती है। सृष्टि में पशु-पक्षी, कीट-पतंग, मनुष्य पेड़-पौधे, नदी-नाले, पहाड़-जंगल सभी आते हैं। ये सभी अपने आप में पूर्ण हैं। जैसे मनुष्य का शरीर पूर्ण है, इसमें कोई कमी नहीं है। शरीर में न कुल घटा सकते है और न कुछ बढ़ा सकते हैं। जैसे आँखें दो हैं तो दो ही ठीक हैं। न तीन और न एक होनी उचित है। इसलिए सृष्टि अपने आप में पूर्ण है।

५- प्रलय - यह अपने आप में पूर्ण है और ईश्वर की व्यवस्था में रहती है। प्रलय में सभी जीव सुषुप्त अवस्था में रहते हैं और परमाणु बिखरे हुए रहते है। इसकी अवधि भी सृष्टि के समान चार करोड़ बत्तीस लाख की होती है। इसके बाद जीव कर्मो के अनुसार क्रमशः धरती पर जन्म लेता है और सृष्टि पुनः चालु हो जाती है। जो सद से उत्तम चार आत्माएं होती है, वे मनुष्यों की उत्पत्ति के बाद चार ऋषियों के रूप में पैदा होते हैं जिनके नाम अग्नि, वायु, अदित्य व अंगिरा होते हैं और उनके मुखों से ईश्वर चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व वेद क्रमशः उच्चारित करवाता है। उस समय जो उत्तम आत्माएँ होती है वे पहले जन्म लेती है फिर उत्तमता के अनुसार क्रमशः आत्माएं जन्म लेती रहती है और सृष्टि चलती रहती है।

६- वेद - जैसा ऊपर लिखे चुके है कि मनुष्य उत्पत्ति के आरम्भ में ईश्वर ने चार ऋषियों के मुख से चार वेद कहलवाए, वे भी पूर्ण है। कारण ईश्वर का ज्ञान पूर्ण होने से, उसके बनाए चारों वेद का ज्ञान भी पूर्ण है। वेदों में ईश्वर ने मनुष्यों को क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए, यह दर्शाया है। यदि मनुष्य अपने जीवन भर वेदों के अनुसार चले तो वह धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर सकता है जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है।

खुशहाल चन्द्र आर्य

संस्थापित–1885 ओ३म् फोन नं0–0522–2286328
श्रीमद्दयानन्दाब्द–192 कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ
का

वार्षिक बृहद् अधिवेशन

दिनांक–28, 29 जनवरी,2017 तद्नुसार दिन शनिवार एवं रविवार
(तिथि–माघ शुक्ल प्रतिपदा एवं द्वितीया) सम्वत्–2073)
अधिवेशन स्थल– सभा भवन प्रांगण– 5, मीराबाई मार्ग, लखनऊ।

आर्य बन्धुओं/बहिनों,

आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ का द्वि–दिवसीय वार्षिक अधिवेशन (साधारण सभा) आगामी दिनांक 28, 29 जनवरी,2017 तद्नुसार दिन शनिवार एवं रविवार को सभा प्रांगण में सम्पन्न होगा, जिसमें पूरे प्रदेश की आर्य समाजों/जिला उप सभाओं/शैक्षणिक संस्थानों एवं गुरूकुलों आदि के प्रतिनिधि भाग लेंगे।

सभा द्वारा आर्य समाजों और जिला सभाओं को प्रतिनिधि चित्र डाक से भेज दिये गये हैं। आप अपनी आर्य समाजों एवं जिला सभाओं का विवरण चित्र में भरकर समस्त श्रोतों से आय का दशांश, सूदकोटि, वेद प्रचार फण्ड, प्रतिनिधि शुल्क एवं आर्य मित्र का वार्षिक शुल्क आदि जमा कर रसीद अवश्य प्राप्त कर लें। विशेष परिस्थिति में कार्यवाहक प्रधान जी की अनुमति से ये चित्र एवं वांछित दशांश आदि के साथ प्रतिनिधि चित्र अधिवेशन से पूर्व अथवा अधिवेशन के समय जमा किये जा सकेंगे। जमा करने वाले धनराशि का आकलन निम्न प्रकार से होगा:–

(क) आर्य समाज के सभासद/सदस्यों का रू0 5/– प्रतिमाह प्रति सदस्य के हिंसाब से एक वर्ष के कुल चन्दे का दशांश।

(ख) आर्य समाज की परिसम्पत्तियों से यथा:– दुकानों/भवनों/अतिथि गृहों/विद्यालयों का किराया, दान से प्राप्त धनराशि, किसी विकय से प्राप्त आय आदि का पूरे वर्ष में प्राप्त कुल धन का दशांश।

(ग) सूदकोटि के रूप में रू0 25/–

(घ) वेद प्रचार फण्ड के रूप में प्रति सदस्य/सभासद रू0 2/– वार्षिक

(च) प्रतिनिधि शुल्क के रूप में प्रत्येक प्रतिनिधि रू0 25/– इसमें किसी भी समाज के पहले 11 सदस्य पर 1, 31 सदस्य पर 2 एवं प्रत्येक अगले 20 सदस्य पूर्ण होने पर अतिरिक्त प्रतिनिधि बन सकेंगे।

(छ) आर्य मित्र का वार्षिक शुल्क रू0 100/– अथवा आजीवन शुल्क के रूप में 1000/– के हिंसाब से।

(ज) जिला आर्य प्रतिनिधि सभाएं रू0 100/– दशांश एक मुश्त तथा रू0 100/– आर्य मित्र शुल्क एवं प्रतिनिधि शुल्क प्रति प्रतिनिधि रू0 25/– भी सभा में जमा करके रसीद प्राप्त कर लें।

(झ) प्रत्येक जिला सभा न्यूनतम 11 समाजों का प्रतिनिधित्व करने पर ही संगठित मानी जायेंगी।

इस प्रकार उपर्युक्त समस्त मदों को जोड़कर जो भी धन बनता हो, उसे चित्र के साथ भरकर सभा में दिनांक–10 जनवरी, 2017 तक अवश्य जमा करा दें। यह धनराशि मनीआर्डर, बैंक ड्राफ्ट अथवा नकद धनराशि के रूप में सभा में चित्र के साथ जमा की जा सकती हैं। मनीआर्डर, कोषाध्यक्ष, आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के नाम भेजें। **बैंक ड्राफ्ट आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, लखनऊ** के नाम से भेजें। जमा धन की रसीद सभा से अवश्य ही प्राप्त कर लें।

सभा प्रांगण में तथा कुछ अन्य स्थानों पर सभी आगन्तुक/प्रतिनिधियों के ठहरने की व्यवस्था है साथ ही भोजन व्यवस्था सभा भवन प्रांगण में ही की गई है। कृपया रास्ते के लिए ऋतु अनुकूल वस्त्रों को साथ रखें।

(डॉ0 धीरज सिंह)	(स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती)	(अरविन्द कुमार)
कार्यवाहक प्रधान	मन्त्री	कोषाध्यक्ष

पृष्ठ..४ का शेष

देश में से यह साम्प्रदायिक विष की लता समूल नष्ट नहीं हो जाती तब तक भारत को स्वतन्त्रता मिल जाने पर भी उसकी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ नही हो सकती। इसीलिये उन्होंने वेद की शिक्षाओं के आधार पर मानवमात्र को एक करना चाहा क्योंकि वेद में, किसी धर्म विशेष या सम्प्रदाय विशेष या मनुष्य विशेष का नाम लेकर शिक्षा नहीं की गयी अपितु मानव मात्र का सामान रूप से सच्चाई, ईमानदारी, सच्चरियता आदि मानव मात्र के समान रूप तो अपेक्षित और सभी सम्प्रदायों में समान रूप से समस्त नैतिक शिक्षाओं का प्रतिपादन किया गया है जिनके आधार पर मानव वस्तुतः मानव कहलाता है। वेद में सूत्र रूप में यही बात मनु भर्वः (तू इन्सान बन) इन शब्दों में कही गई है किसी व्यक्ति विशेष का या भाव विशेष या सम्प्रदाय विशेष को नहीं किन्तु कार्य जितना महान और उत्तम होता है उसके रास्ते में बाधा डालने वाले कांटे भी उतने ही अधिक होते हैं। स्वामी जी के इस मानवता के एकीकरण के कार्य को एक मतान्ध युवक मन ही मन में उनकी जान का दुश्मन बन गया और २३ दिसम्बर, सन-१९२६ को अवसर पाकर उस महान् आत्मा को हमेशा के लिये भौतिक शरीर से पृथक कर दिया। उनकी शव यात्रा में मानवता की एकता के साथी सभी वर्ग के व्यक्तियों में शामिल होकर अपनी श्रद्धांज्जलि दी। पं० जवाहर लाल नेहरू और डा० राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी श्रद्धाज्जंलि और शोक संदेश भेजे।

आर्य समाज के लिये अनुकरणीय

स्वामी श्रद्धानन्द की राष्ट्र वादिता आज आर्यसमाज के लिये अनुकरणीय है। राष्ट्रीय आन्दोलन के सामने स्वामी जी ने आर्यसमाज के अन्य कार्यक्रमों को गौण समझा सम्पूर्ण आर्य समाज की शक्ति इस कार्य में लगा दी। आज राष्ट्र के सामने अनेक विषम समस्यायें है यदि आर्यसमाज का नेतृत्व पदलिप्सा और स्वार्थ से ऊपर उठकर स्वामी श्रद्धानन्द की तरह परम राष्ट्रवादी बन जाये तो राष्ट्रीय समस्यायें सुलझाने में काफी सहयोग मिल सकता है। वे प्रायः कहा करते थे कि अधिकतर शब्द में मुझे स्वार्थ की गन्ध आती है। ऐसे निःस्वार्थ स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के जीवन के आदर्श उन आधुनिक सभी राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के सशक्त साधन बन सकते हैं। और आर्य समाज का मार्ग भी प्रशस्त हो सकता है।

www.thearyasamaj.org

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग लखनऊ दूर./फैक्स:०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०६४१२६७८५७१, ... २१६२, सम्पादक-६५३२७४६६००
ई.मेल-apsabhaup86... ...m

सेवा में,
....
....
....

पृष्ठ...१ का शेष.....

दूसरा विवाह बिल्कुल नहीं करती।''

उस समय विधवा- विवाह का उल्लेख नहीं मिलता, सम्भवतः बाल विवाह के न होने से। अपने पूर्ण यौवन में कन्नौज के राजा ग्रहवर्मा ने हर्ष की बहिन राज्यश्री से विवाह किया था। बाण के कथनानुसार हर्ष के राज्य पण्डित बाण ने एक युवती ब्राह्मण-कन्या से शादी की थी। शारीरिक दृष्टि से पूर्ण समर्थ होने पर राज्यश्री का परिणय किया गया था, विवाह के दिन ही सम्पूर्ण संस्कार की समाप्ति हो गई थी। बाण ने अपने आप भी मयूर की युवती बहिन के साथ विवाह किया था। पुराने और आधुनिक भारत को अलग करने वाली कड़ी के रूप में हर्ष का समय कहा जा सकता है क्योंकि इसके बाद हम देखेंगे कि धीरे-धीरे बाल-विवाह का प्रचलन जारी होता गया। (वैद्य ६४-६५)।

वर्णव्यवस्था अभी तक मजबूत न हुई थी कि जितना कि पीछे जाकर हो गयी क्योंकि हम श्री वैद्य लिखित 'मध्यकालीन हिन्दू भारतवर्ष' नाम वाली अंग्रेजी पुस्तक की पहली जिल्द में पढ़ते हैं- ''वर्णव्यवस्था अब तक भी ढीली थी और ऊँचे वर्ण वाले समीपस्थ निचले वर्ण वाले से विवाह कर सकते थे और इसका सन्तान के वर्ण पर कोई असर न होता था। ह्यूनसाड़् वर्णन करता है कि हर्ष की लड़की का विवाह ध्रुवभट् से हुआ था। पहला वैश्य था तथा पिछला एक क्षत्रिय था। बाण लिखता है कि हर्ष की बहिन कन्नौज के मौखरि ग्रहवर्मा से ब्याही गयी थी। हर्ष के परिवार का नाम वर्धन अथवा भूति शब्द से समाप्त होता था जो कि वैश्य-वर्ण का वाचक था, मोखरियों के नाम वर्मन् शब्द से समाप्त होते थे जिनसे उनका क्षत्रिय-वर्ण झलकता था। ..... ऊपरले वर्ण वाले निचली वर्ण वाली लड़कियों से विवाह कर लेते थे परन्तु यह अनुलोम विवाह साधारण तौर पर साथ वाले निचले वर्ण वाले के साथ ही होता था। कभी-कभी दो या अधिक निचली वर्ण वाली कन्या के साथ भी विवाह हो जाता था। बाण ने लिखा है कि उसके दो परस्व भाई (शूद्र स्त्री से ब्राह्मण के लड़के) थे।'' (पृष्ठ ६१ और ६२)

जैसा हम बतला आये हैं, उस समय उपजातियाँ नहीं थीं। ''किसी प्रकार के छोटे-मोटे भेदों के बिना ब्राह्मण एक वर्ण में गिने जाते थे। पञ्च द्रविड़ों और पञ्च गौड़ों के वर्तमान भेद तथा दूसरी छोटी-मोटी उपजातियों के विभेद उस समय तक पनप न सके थे ....।'' (पृष्ठ ६७)

क्षत्रियों के सम्बन्ध में श्री वैद्य लिखते हैं- ''जिस प्रकार पाँच गौड़ तथा पाँच द्रविड़-१० उपभेद पैदा न हुए थे, इसी प्रकार राजपूत खत्रियों के भेदों से क्षत्रिय नहीं बंटे थे..... और न क्षत्रियों ने ३६ परिवारों में विभक्त होकर अपने को पवित्र वंश का मानकर विवाह को अपने तक ही सीमित कर दिया था। इन ३६ परिवारों में से किसी एक का नाम भी इस समय तक सुनने में नहीं आता .... किन्हीं विशिष्ट परिवारों में विवाह सम्बन्धी पाबन्दी न लगाकर भारतीय क्षत्रिय एक संयुक्त वर्ण की तरह रहते थे।'' (पृष्ठ ७०)

''वैश्यों ने दूसरे ऊँचे वर्णों के समान अपने वर्ण की पवित्रता को अक्षुण्ण नहीं रखा है और उनमें से कुछ तो शूद्रों की स्थिति तक पहुँच गये हैं। ह्यूनसाग्ड़ के समय के वैश्य, उसके कथानुसार, व्यापारी, व्यवसायी, महाजन होते थे, इन्होंने सम्भवतः अपने को सीमित क्षेत्र में ही बाँधे रखा। माहेश्वरी तथा अग्रवाल आदि वैश्यों की उपजातियों के नामकरण अभी तक न हुए थे।'' (पृष्ठ ७२ और ७३)

अन्त में, शूद्रों की बारी आती है, ''ह्यूनसाग्ड़ के अनुसार जिनका व्यवसाय खेती का काम था। ईसाई संवत् से पूर्व खेती वैश्य किया करते थे, सेवा कार्य शूद्र श्रेणी पर छोड़ा हुआ था। जिन्दगी के प्रति अरुचि सम्बन्धी बौद्ध विचार के फैलाव से उद्योग-धन्धे का यह परिवर्तन हुआ। ...... खेतिहरों के सिवाय बहुत-सी श्रेणियाँ थीं, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के श्रम-कार्यों को करती थीं और ये श्रेणियाँ शायद मिले-जुले प्रारम्भ वाली थीं।'' (पृष्ठ ७४)

तथाकथित 'अक्षूतों की अवस्थिति के सम्बन्ध में श्री वैद्य का यह विचार कि वे वैदिक काल में थे, सम्भव प्रतीत नहीं होता। प्रतीत होता है कि वे ह्यूनसाग्ड़ की यात्रा के समय अज्ञात नहीं थे। वह कहता है- ''कसाई, मछुआरे, जल्लाद और मेहतरों के घर विशेष प्रकार के निशानों से चिह्नित होते थे। वे शहर से बाहर रहने के लिए बाध्य हैं, जब वे गाँव में घुसते हैं तो उन्हें बाँयी ओर सरकते हुए जाना पड़ता है।'' श्री वैद्य आगे लिखते हैं -

''गन्दी आदतों वाले तथा मरे हुए माँस पर जिन्दगी बसर करने वाले द्रविड़ जातियों की तलछट से सम्भवतः इन दलित जातियों का निर्माण हुआ होगा। परन्तु सन् १६०१ की जनगणना में पंजाब और राजपूताना में इनमें आर्य जाति का मेल भी पाया गया। सर एच० रिस्ले ने इस अवसर पर मानव जाति के विज्ञान सम्बन्धी विशेष गणना की थी। इस गणना से मालूम पड़ा कि पंजाब के चमार और चूहड़ नसल में पूरी तरह आर्य हैं, शायद ये बौद्ध -काल में अपने पेशे के कारण नीचे समझे जाने लगे। स्मृतियों में कहा है कि प्रतिलोम विवाह की सन्तान-खास तौर से शूद्र पतियों की ब्राह्मण स्त्रियों से हुई सन्तान- यद्यपि ये बहुत कम देखने में आती थीं- चाण्डाल समझी जाने लगीं, इस प्रकार से इनकी नसों में आर्य खून बहने लगा।'' (पृष्ठ ७५)

सारांश में - सम्राट हर्ष की मृत्यु तक भारतीय भूमि पर विदेशियों के पाँव जमने नहीं पाये थे। विदेशी हमलों को लगातार व्यर्थ कर दिया गया था, यदि ये कभी किसी अंश में कुछ समय के लिये कामयाब हुए भी तो इन्हें आखिर में विफल कर ही दिया गया। अनार्य श्रेणियों का उस समय अभाव था। यदि कभी अनार्य आये भी तो उन्हें आर्यो के समाज ने अपने में पचा लिया। उस समय तीन ही ऊँचे वर्ण थे- ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य। इनमें कोई उपजाति न थी। मुख्य वर्णों में पारस्परिक विवाह प्रायः हुआ करते थे। शायद शूद्रों में उनके विभिन्न कार्यों के अनुसार उपजातियाँ थीं। आखिर में, तथाकथित अछूत या पंचम वर्ण वाले भी थे जो गांव के बाहर रहने के लिये बाधित थे।

उन दिनों बाल-विवाह का प्रचलन नहीं था और इसीलिये बाधित विधवावृत्ति भी हिन्दू समाज की शान्ति को नष्ट करने के लिए पैदा नहीं हुई थी। राज्यश्री जैसा विधवावृत्ति का कोई उदाहरण कभी होता भी था तो उस अशान्त विधवा को बौद्ध-विहार अपने भिक्षुणियों के संघ में लेने के लिये तैयार रहते थे। हिन्दू समाज की स्त्री की वर्तमान हालत की अपेक्षा हर्ष के समय हिन्दू स्त्री की बहुत अच्छी हालत थी। परन्तु इसमें एक अपवाद था। रामराज्य का एक पत्नित्व का उदाहरण क्षत्रिय राजाओं में कहीं विरले ही देखने को मिलता था। हिन्दु राजाओं केक रानीवासों में कई-कई पत्नियाँ, उपपत्नियाँ, वेश्यायें, लड़ाई में जीते हुए या मारे गये राजाओं की विधवायें रहती थीं जो कि शायद गुलामी की हालत तक पहुँच गई थीं। विधवा विवाह के असम्मत होने से विजेता के परिवार की इस तरह की स्त्रियों की हालत उपपत्नियों के समान हो गई थी। इसमें अचम्भे की कोई बात नहीं है कि ये स्त्रियाँ गुलामी की अपेक्षा मर जाना ज्यादा पसन्द करती थीं और अपने पतियों की चिताओं पर या आग लगाकर स्वतन्त्रतापूर्वक मौत का आह्वान करती हुई बलि दे देती थीं।

''इन अपवादों के सिवाय स्त्रियों की हालत सामान्यरूप से बहुत अच्छी मालूम पड़ती है। उनके साथ अच्छा व्यवहार होता था और उन्हें सुशिक्षित किया जाता था। राज्यश्री विभिन्न कलाओं और शास्त्रों में निष्णात एवं एक सुशिक्षित महिला थी।'' (वैद्य, पृष्ठ ६६)

उस समय के लेखकों द्वारा वर्णन से मृत्यु संस्कार के अवसर पर की गई प्रथाओं से मालूम पड़ता है कि ब्राह्मणों को भोजन खिलाया जाता था और राजा की व्यक्तिगत सम्पत्ति में से उन्हें दान भी दिया जाता था अपितु उनके देखने से उनके शोक पर असर पड़ता था। (वही, पृष्ठ ६८)

अभी हाल (नवम्बर, १६२४) में रावलपिण्डी में सनातन धर्म कान्फ्रेंस में सभापतित्व करते हुए पुराने सनातनी नेता पण्डित मदनमोहन मालवीय ने कहा था कि श्राद्ध के समय ब्राह्मणों को दिया जाने वाला भोजन पुरखाओं तक नहीं पहुँचता, परन्तु यह उनके सद्गुणों की पुण्यस्मृति में दिया जाता था।

संक्षेप में, विक्रमी संवत् के उत्तरार्थ में हिन्दुओं की यह दशा थी जब इस महान् राष्ट्र का अधः पतन शुरू हुआ। जनता की राजनीतिक मनोवृत्ति तथा अवस्था के इस परिवर्तन से विदेशियों के हमलों के शिक... बनने में आसानी हुई तथा सामाजिक रीतिरिवाज विदेशी हमले के कारण गुलामी की हालत हो जाने से ज्यादा बिगड़ने चले गये।

●●●

महर्षि बलिदान स्मृति

महर्षि तेरा बलिदान जगत को,
है कैसे जीना, संदेश दे गया।
सत्य पथी ही है कहलाता मानव,
ऋषि जाते जाते उपदेश दे गया।

प्राणी मात्र के, हृदय प्रदेश में,
वही दयानन्दी धारा है आज भी जिन्दा,
कथनी-करनी को साकार रूप दे,
असमाजिक भावों की सदा ही निन्दा,

जीवन संग्राम है, बस लड़ता रहा,
मानवीय मानवता का सूत्र दे गयौ।
सत्य पथी है,........................।।

श्रद्धा और विश्वास सदा ही जीता,
जग कुरीति की, की सदा ही निन्दा,
सत्य स्वरी, था सच्चा सात्विक,
वह बलिदानी है आज भी जिन्दा,

अन्तिम शब्द प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो,
जाते जाते मरा ऋषिवर कह गया।
सत्य पथी है,........................।।

ऋषिवर तेरे जैसे, प्रभु भक्त ही,
धरा के सच्चे बलिदानी कहलाते हैं,
भव्य मृत्यु के द्वारा ऋषि ही,
जीवन जीने का सूत्र बतलाते हैं।

शरीरान्त का होना अटल है ''सागर''
धन्य है ऋषिवर संदेश दे गया।।
सत्य पथी है,........................।।

-डॉ. बी.पी. सागर
अन्तरंग सदस्य
आ.प्र.सभा उ.प्र.
आर्य समाज रानीमण्डी, इलाहाबाद

स्वामी—आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक—आचार्य वेदव्रत अवस्थी, मुद्रक प्रकाशक—श्री सियाराम वर्मा, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5—मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है—सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।